एक नई सुबह

पूर्वी उत्तर प्रदेश में समुदाय द्वारा अपने बच्चों के अधिकारों के पालन एवं संरक्षण की प्रेरणादायक कहानियां

पूर्वी उत्तर प्रदेश
बाल अधिकार
परियोजना 2010–15

unicef
unite for children

प्रकाशन की तिथिः अगस्त, 2015

एक नई सुबह

पूर्वी उत्तर प्रदेश में समुदाय द्वारा अपने बच्चों के अधिकारों के पालन एवं संरक्षण की प्रेरणादायक कहानियां

पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना 2010–15

unicef

unite for children

प्रस्तावना

उत्तर प्रदेश एक गतिशील औद्योगिक और कृषि क्षेत्र है परंतु यहां की शिशु और बाल मृत्यु दर भारत में सर्वोच्च रही है। नमूना पंजीकरण प्रणाली (एस.आर.एस.) 2014 के अनुसार, राज्य की शिशु मृत्यु दर 50 थी जो कि अखिल–भारतीय दर से कहीं अधिक है। वार्षिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण (ए.एच.एस.) 2012–13 के अनुसार, नव–प्रसव (निओ–नैटल) मृत्यु दर 49 थी और पांच वर्ष से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु दर 90 थी।[1] पिछले दशक में जहां राज्य ने अनेक संकेतकों की दृष्टि से महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल की हैं, वहीं भारत की जनगणना, 2011 के अनुसार बाल लिंग अनुपात 2001 में प्रति 1000 पर 916 से गिरकर प्रति 1000 पर 899 पर आ गया था। राज्य की एक–तिहाई आबादी गरीबी रेखा से नीचे जीवन बसर करती है और स्कूल छोड़कर काम पर जाने वाले बच्चों की संख्या यहां सबसे अधिक है।[2] मजबूरन काम पर लगाये जाने वाले बच्चों की संख्या बढ़ी है। उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जाति की आबादी का अनुपात भारत के सभी राज्यों में सबसे अधिक (20.5%) रहा है।[3]

भारत के 20 प्रतिशत से अधिक बाल मजदूर उत्तर प्रदेश में रहते हैं और अधिकतर थोड़े पैसे के लिये फैक्ट्रियों और कालीन उद्योग में छोटे–मोटे काम करते हैं। उनकी मजदूरी उनके परिवार की आय में थोड़ा सा योगदान करती है। इन क्षेत्रों में बाल मजदूरी के इतना व्यापक होने का मुख्य कारण कर्ज का बोझ है जो कई परिवारों को बच्चों को काम पर भेजने के लिए मजबूर करता है। निम्न साक्षरता दर जो 69.72% है, की वजह से यह स्थिति और भी जटिल हो जाती है।[4]

उत्तर प्रदेश में यूनिसेफ ने बच्चों के अधिकार विशेषकर शिक्षा और संरक्षण के लिए अनेक पहलकदमियां की हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना 2010–2014 के दौरान कार्यान्वित की गई थी जिसका मुख्य उद्देश्य बच्चों के शिक्षा के अधिकार और संरक्षण पर विशेष जोर देते हुए राज्य के तीन जिलों – सोनभद्र, मिर्जापुर और जौनपुर में एक संरक्षणकारी वातावरण तैयार करना था।

इस परियोजना के मुख्य आयाम इस प्रकार थे: 6–14 आयु के सभी बच्चों को अच्छी शिक्षा उपलब्ध कराना; बाल अधिकारों, बाल संरक्षण के मुद्दों, विशेषकर बाल मजदूरी जैसे मुद्दों को हल करने के लिए बाल संरक्षण ढांचे तैयार करना; बाल अधिकारों और बाल संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए परियोजना के अंतर्गत आने वाले गांवों में परिवारों और समुदायों के ज्ञान को बढ़ाना तथा उनके दृष्टिकोण व सोच में बदलाव लाना; सेवा प्रदाताओं तक और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं

---

1. Annual Health Survey, Uttar Pradesh, Office of the Registrar General & Census Commissioner of India, Ministry of Home Affairs, 2012-13
2. Office of the Registrar General and Census Commissioner, India, 'Census of India', 2011, <www.censusindia.gov.in>
3. Office of the Registrar General and Census Commissioner, India; Release of Primary Census Abstract; Data Highlights
4. UNICEF, 'Breaking free from child labour', <unicef.in/Story/640/Breaking-free-from-child-labour>

तक असुरक्षित परिवारों की पहुंच को बढ़ाना, विशेष रूप से सामाजिक रूप से पिछड़े समुदायों के बच्चों को अधिकार को प्राप्त करवाने के लिए महिलाओं को सशक्त बनाना।

परियोजना के विशेष हस्तक्षेप इस प्रकार थेः सामाजिक सुरक्षा प्रणालियों को मजबूत बनाकर स्कूल न जाने वाले बच्चों की पहचान करना और उन्हें स्कूलों में दाखिला दिलाना; समेकित बाल संरक्षण संगठनों की स्थापना करना और उन्हें मजबूत बनाना; बच्चों के प्रति मैत्रीपूर्ण 10 सूत्री एजेंडा को लेकर जागरूकता बढ़ाना। इस परियोजना को तीन जिलों के 5,160 गांवों में कार्यान्वित किया गया था।

अपने लगभग 35 साझेदारों के साथ, पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना की इस पांच वर्ष लंबी यात्रा ने समुदायों और बच्चों के जीवन में कई छोटे–बड़े बदलाव लाये हैं। जहां इस परियोजना का बाल अधिकारों के बड़े संकेतकों पर प्रभाव पड़ा है, वहीं कई व्यक्तिगत और सामुदायिक सफलताओं ने परियोजना वाले जिलों में संस्थाओं को मजबूत बनाकर बाल अधिकारों को हासिल करने में काफी अधिक योगदान किया है।

पुस्तक में यह बताया गया है कि किस तरह परियोजना के हस्तक्षेपों/कार्यक्रमों ने लोगों के जीवन को छुआ है।

इस पुस्तक में ऐसी कहानियां शामिल हैं जो यह बताती हैं कि किस तरह बाल विवाह और बाल मजदूरी की कुप्रथाओं पर रोक लगाई गई; किस तरह ग्राम स्तर की बाल संरक्षण समितियों (सी.पी.सी.) और स्कूल प्रबंधन समितियों (एस.एम.सी.) को मजबूत बनाया गया और किस तरह आंगनवाड़ी केन्द्रों द्वारा प्रदान की गई सेवाओं में सुधार लाया गया। इसके अलावा इस पर प्रकाश डाला है कि किस तरह परियोजना ने बच्चों और किशोर–किशोरियों के जीवन और भविष्य को प्रभावित करने वाले फैसलों में उनकी भागीदारी को बढ़ाया। समुदायों ने परियोजना के कार्यक्रमों को पूरे दिल से अपनाया और उत्साह के साथ बच्चों के अधिकार हासिल करने में भागीदारी की। वे अधिक सशक्त और जागरूक बन गये हैं। ग्राम स्तर पर अपने को संगठित करके वे एन.जी.ओ. और ब्लॉक स्तरों पर हितधारकों के साथ कार्य में शामिल हुए और इस तरह उन्होंने बाल अधिकारों को हासिल करने तथा बढ़ावा देने के लिए ग्राम स्तर पर स्थिरता सुनिश्चित की। इस पुस्तिका का उद्देश्य व्यक्तियों, बच्चों, समुदाय के सदस्यों, समुदाय के नेताओं, समुदाय स्तर के संगठनों और ढांचों तथा अन्य घटकों की झांकियां प्रस्तुत करना है जिन्होंने पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना की सफलता को परिभाषित किया है।

यह दस्तावेज को तैयार करना तीनों जिलों में एन.जी.ओ. साझेदारों और ग्राम स्तर के हितधारकों द्वारा प्रदान की गई स्नेहपूर्ण सहायता के द्वारा ही संभव हुआ है। परियोजना में भाग लेने वाले समुदायों द्वारा दर्शाया गया। उत्साह सचमुच प्रेरणादायी था, और यह इस पुस्तिका में शामिल सभी कहानियों को एक सूत्र में पिरोता है।

पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना के अंतर्गत ग्राम–स्तरीय बाल संरक्षण समूह

पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना के अंग के रूप में बाल अधिकारों और बाल संरक्षण के मुद्दों – विशेषकर बाल मजदूरी के मुद्दे को हल करने के उद्देश्य से ग्राम स्तर पर बाल संरक्षण समूह तैयार किये गये थे। ये समूह समुदाय–आधारित हैं और समुदाय के नेतृत्व में संचालित होते हैं। समय–समय पर सदस्यों को दिये गये प्रशिक्षणों के माध्यम से जो जागरूकता पैदा हुई उससे ये समूह बाल विवाह, बाल मजदूरी, शिक्षा, बच्चों की तस्करी, जैसे मुद्दों पर काम करने के लिए सशक्त बने। बाल संरक्षण समिति, महिला समूह, बाल संघ या बाल पंचायत और महिला चैम्पियन ने न केवल महिलाओं तथा बच्चों, बल्कि समुदाय के जीवन पर भी प्रभाव डाला है। इसके साथ ही "बच्चों के निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा अधिनियम, 2009" के अंतर्गत गठित की गई स्कूल प्रबंधन समिति ने भी ग्राम–स्तरीय बाल संरक्षण समूहों का साथ दिया। ये ग्राम–स्तरीय समूह समय–समय पर अपनी बैठकें करते हैं और सार्वजनिक विचार–विमर्श तथा अन्य कार्यकलाप आयोजित कराते हैं।

बाल संरक्षण समिति

बाल संरक्षण समिति (सी.पी.सी.) में 11 सदस्य होते हैं। इन सदस्यों में ग्राम प्रधान, आंगनवाड़ी कार्यकर्ता, (एडब्ल्यूडब्ल्यू) स्थानीय सरकारी स्कूल का एक अध्यापक और एक्रीडिटिड सोशल हैल्थ वर्कर (आशा), स्कूल प्रबंधन समिति का एक सदस्य, दो युवा प्रतिनिधि (एक लड़की और एक लड़का) और थोड़े स्थानीय सामाजिक कार्यकर्ता शामिल होते हैं।

महिला समूह या महिला मंडल

महिला समूह या महिला मंडल में 10–15 महिलाएं होती हैं जिनमें गांव की आशा और आंगनवाड़ी कार्यकर्ता भी शामिल हैं। महिला समूह के सभी सदस्यों को सामुदायिक गतिशीलता लाने में कुशल बनाया गया और वे समुदाय को लामबंद करती हैं। महिला समूह के सदस्यों को "महिला चैम्पियन"/बाल मित्र कह कर सम्मानित किया गया है।

महिला समूह की बैठक–बाल हकों के मुद्दों का समाधान करने के लिए एक मंच

बाल संघ या बाल पंचायत (बच्चों की समिति)

बाल संघ या बाल पंचायत में गांव के 30–35 बच्चे शामिल होते हैं। इसके सदस्य बाल अधिकारों के मुद्दों पर आपसी विचार–विमर्श करते हैं। बाल संघ जिन मुद्दों को अपने स्तर पर हल नहीं कर पाता, उन मुद्दों को वह सी.पी.सी. के युवा प्रतिनिधियों के सामने रखता है। फिर युवा प्रतिनिधि इन मामलों को सी.पी.सी. के सामने प्रस्तुत करते हैं।

स्कूल प्रबंधन समिति

स्कूल प्रबंधन समिति (एस.एम.सी.) स्कूलों के लोकतांत्रीकरण के लिए और स्कूलों के संचालन में माता–पिता तथा स्थानीय समुदायों की भूमिका को सुगम बनाने का एक मंच है। पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना के अंग के रूप में एस.एम.सी. के सदस्यों को बाल शिक्षा पर विशेष ध्यान प्रदान करते हुए बाल अधिकारों पर प्रशिक्षण प्रदान किया गया है। एस.एम.सी. के कुल 15 सदस्य होते हैं जिनमें से 11 सदस्य या तो माता–पिता या अभिभावक होते हैं; और इनमें से भी 50 प्रतिशत महिलाएं होती हैं। बाकि चार सदस्यों में वार्ड सदस्य, सहायक नर्स दाई (ए.एन.एम.), लेखपाल* और स्कूल के हैडमास्टर शामिल होते हैं। एस.एम.सी. की बैठक महीने में एक बार होती है और वह स्कूल के संचालन पर निगरानी रखती है। वह स्कूल के विकास की योजना भी तैयार करती है। अपनी अन्य जिम्मेदारियों के अलावा एस.एम.सी. आस–पास के बच्चों को स्कूल में दाखिला दिलाने और उनकी उपस्थिति को जारी रखने में भी मदद करती है।

* लेखपाल गांव–स्तरीय राजस्व अधिकारी हैं जो भूमि रिकार्ड बनाए रखने की जिम्मेदारी निभाते हैं।

शब्द संक्षेप

ए.एन.एम.	सहायक नर्स
आशा	प्रत्यायित सामाजिक स्वास्थ्य कायकर्ता
बी.डी.ओ.	प्रखंड विकास अधिकारी
बी.ई.ओ.	प्रखंड शिक्षा अधिकारी
सी.डी.पी.ओ.	बाल विकास परियोजना अधिकारी
सी.एच.सी.	सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र
सी.पी.सी.	बाल संरक्षण समिति
एफ.आई.आर.	प्रथम सूचना रिपोर्ट
जी.एस.एस.	ग्राम शिक्षा समिति
आई.सी.डी.एस.	समेकित बाल विकास सेवाएं
आई.एफ.ए.	आयरन फोलिक एसिड
के.जी.बी.वी.	कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय
एम.सी.पी.	मां और बाल संरक्षण कार्ड
एन.जी.ओ.	गैर–सरकारी संस्था
ओ.बी.सी.	अन्य पिछड़ी जाति
पी.एच.सी.	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र

आर.टी.ई.	शिक्षा का अधिकार
एस.डी.एम.	उप प्रभागीय न्यायाधीश
एस.एम.सी.	बाल प्रबंधन समिति
एस.आर.एस.	नमूना पंजीकरण प्रणाली
यूनिसेफ	संयुक्त राष्ट्र बाल कोष
वी.एच.एन.डी.	ग्राम स्वास्थ्य पोषण दिवस

विषय-सूची

प्रस्तावना	*iii*
पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना के अंतर्गत ग्राम–स्तरीय बाल संरक्षण समूह	*v*
शब्द संक्षेप	*vii*
बच्चों को मिली उनकी पहचान	1
बदलाव की लहरें	4
रोगों को रोकने वाले प्रहरी	7
बाल विवाह से बच्चों की हुई रक्षा	10
बचपन की वापसी	13
निर्धन बच्चों को शिक्षा का अधिकार	15
महिलाओं की संगठित पहल	18
लड़कियों को मिला समान अवसर	21
महिलाओं का बढ़ता नेतृत्व	24
शिक्षा के सपने हुए साकार	27
नहीं रुकेंगे, शिक्षा का हक लेकर रहेंगे	29
निष्पक्ष व्यवहार की मांग	32
बच्चों को मिला अनुकूल माहौल	34
भेदभाव हुआ दूर	37

सुरक्षित वातावरण के लिये सामूहिक प्रयास 39
बचपन बचा बाल विवाह के अभिशाप से 41
घर–वापसी की खुशी 43
उच्चतम नामांकन है गांव की जीत 46
लंबे संघर्ष से मिली विजय 49
गंगहरा गांव की अनूठी महिला 51
खुले बेहतर जिंदगी के दरवाज़े 53
शब्दावली *56*

बच्चों को मिली उनकी पहचान

यह कहानी इस बारे में है कि किस तरह ग्रामीण उत्तर प्रदेश के एक गांव ने जन्म-पंजीकरण का सरल सा कदम उठाकर बच्चों का भविष्य सुरक्षित करने की अपनी जिम्मेदारी को निभाया

जौनपुर जिले के मदियोन ब्लॉक के गांव बकिया निवासी शंकर का कहना है, "मैंने यह कभी भी नहीं सोचा था कि एक ऐसा समय आयेगा जब गांव के हर माता–पिता अपने बच्चे के जन्म के पंजीकरण के महत्व को समझ लेंगे।"

बकिया गांव के किसी भी निवासी से आप बच्चों के जन्म पंजीकरण महत्व के बारे में पूछ लीजिये। आप उनकी जागरूकता से दंग रह जायेंगे। इस संबंध में बकिया का रिकॉर्ड उल्लेखनीय है। इस गांव में वर्ष 2014 में लगभग 90 प्रतिशत बच्चों के जन्म

जन्म पंजीकरण प्रमाणपत्र हर बच्चे का बुनियादी अधिकार है

का पंजीकरण कराया गया था। यह कोई कम बड़ी उपलब्धि नहीं है, खासकर एक ऐसे समुदाय के लिए जिसे पहले ऐसी कोई जानकारी भी नहीं थी कि जन्म प्रमाण–पत्र न होने पर बच्चों को आगे चलकर किन–किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है।

बकिया के लोग या तो 'अन्य पिछड़ा' वर्ग से हैं या फिर अनुसूचित जाति के हैं। वे छोटे–मोटे कृषि कार्य, पशुपालन और दिहाड़ी पर मजदूरी करके अपना गुजारा चलाते हैं। बाल संरक्षण समिति (सी.पी.सी.) को उन्हें बच्चों के जन्म पंजीकरण का महत्व समझाने में कई महीने लगे।

सी.पी.सी. ने बैठकें आयोजित कीं और जागरूकता कार्यकलाप चलाये ताकि लोगों को आयु तथा पहचान संबंधी दस्तावेजों के महत्व के बारे में पता चल सके। गांव के लोगों को यह समझाया गया कि अगर बच्चों के पास ऐसे दस्तावेज नहीं होंगे तो उन्हें भेदभाव का सामना करना पड़ सकता है और कुछ बुनियादी

हाल ही में बकिया गांव के 187 बच्चों का जन्म प्रमाणपत्र जारी किया गया

सेवाओं जैसे स्वास्थ्य और शिक्षा, से वंचित होना पड़ सकता है। उन्हें यह भी बताया गया की जन्म प्रमाणपत्र हर बच्चे का पहला कानूनीअधिकार है और जन्म और मृत्यु पंजीकरण अधिनियम, 1969, के तहत अनिवार्य दस्तावेज है।

बच्चों ने भी बकिया के लोगों पर प्रभाव डाला। सी.पी.सी. के एक सदस्य 15–वर्षीय सत्यम कुमार का कहना है कि, "मैंने घर–घर जाकर लोगों को बताया कि बच्चों के जन्म पंजीकरण प्रमाण–पत्र बनाना जरूरी है।"

जन्म पंजीकरण के महत्व के बारे में जागरूकता की कमी ही अकेली दिक्कत नहीं थी; समुदाय को तो यह भी मालूम नहीं था कि प्रमाण–पत्र बनाने की नई और सरल प्रक्रियाएं क्या–क्या हैं।

महिला समूह की सदस्य हीरावती देवी ने यह बताया कि, "पहले जन्म का पंजीकरण कराने के लिए कई बार ब्लॉक कार्यालय में जाना पड़ता था और जटिल कागजी कार्रवाई की जरूरत भी पड़ती थी। इसमें

"पहले जन्म पंजीकरण कराने का मतलब होता था सरकारी कार्यालयों के कई चक्कर लगाना और बोझिल किस्म का कागजी काम करना। इसमें हफ्तों लग जाते थे और अक्सर विभिन्न अधिकारियों को रिश्वत देनी पड़ती थी।"

हीरावती देवी,
महिला समूह की सदस्य, बकिया

बकिया गांव में पिछले वर्ष जन्मे लगभग 90 प्रतिशत बच्चों के जन्म पंजीकृत किये गए हैं और उन्हें जन्म प्रमाणपत्र दिये गये हैं। अब गांव वाले यह जानते हैं कि जन्म प्रमाणपत्र एक अनिवार्य दस्तावेज है जो कई सेवाओं के लाभ दिला सकता है और उन्हें विभिन्न प्रकार के शोषण से बचा सकता है।

हफ्तों लग जाते थे और कई बार अधिकारियों को रिश्वत भी देनी पड़ती थी।" इसका मतलब था कि जिन दिनों आप सरकारी कार्यालय में जाएंगे उन दिनों आपकी मजदूरी का नुकसान होगा; साफ बात है कि गांव के लोगों के लिए ऐसा करना मुश्किल था। अभियान के दौरान, पैरवी के फलस्वरुप, जिला रजिस्ट्रार ने बच्चों के जन्म के 21 दिन बाद तक ए.एन.एम. को जन्म प्रमाणपत्र जारी करने के लिए अधिकृत किया।

जिला स्तरीय सरलीकृत प्रक्रिया पर अमल करते हुए, सी.पी.सी. ने समुदाय को समझाया कि उन्हें एक जन्म पंजीकरण फॉर्म भरना है, उस पर दो रुपये की स्टैम्प लगानी है और उसे पंचायत कार्यालय में सौंपना है ताकि देरी से जन्म पंजीकरण किये गये बच्चों का जन्म प्रमाण–पत्र जारी करने की प्रक्रिया शुरु की जाये।

हाल ही में बकिया में 187 जन्म प्रमाण–पत्र जारी किये गये हैं। दिलचस्प बात यह है कि यह सफलता केवल बकिया गांव में ही हासिल नहीं की गई। मदियोन के 45 गांवों में बच्चों के जन्म का 70 से 80 प्रतिशत तक पंजीकरण हुआ है।

इस जागरूकता का एक अनपेक्षित परिणाम यह हुआ कि गांवों के लोग आशा कार्यकर्ता, ए.एन.एम. और आंगनवाड़ी कार्यकर्ता से अधिक जानकारी तथा बेहतर सेवाएं प्रदान करने की मांग करने लगे। गांव की एक महिला माधुरी ने बताया "पहले आंगनवाड़ी कार्यकर्ता घर ले जाने वाला राशन नियमित रूप से बांटती ही नहीं थी, पर अब हम नियमित रूप से राशन के वितरण की मांग करने लगे हैं। इतना ही नहीं अब हम अपने बच्चों के टीकाकरण सेवाओं के अधिकार की मांग भी कर रहे हैं।''

यह साफ है कि मदियोन के गांवों में बच्चों की पहचान और अधिकार चर्चा का विषय बन गये हैं। यह तो बस शुरुआत है!

नवटोलिया महिला समूह के सशक्त सदस्य बदलाव का नेतृत्व कर रहे हैं

बदलाव की लहरें

महिलाओं के एक समूह ने जिन्होंने कभी स्कूल का मुंह तक नहीं देखा - नये व्यवहार अपनाने और बाल अधिकारों को हासिल कराने के लिए पूरे गांव को प्रेरित करके बदलाव का एक आदर्श स्थापित किया

एक ट्रांस्मिशन टावर के साथ–साथ एक कच्चा रास्ता नवटोलिया की ओर जाता है। यह सोनभद्र जिले के चोपन ब्लॉक में एक सीधी–सादी बस्ती है। इस शांत बस्ती के अधिकतर मकान आधे–पक्के हैं; और इन्हीं मकानों में से एक में विचार–विमर्श कर रही महिलाओं की आवाजें सुनाई दे रही हैं। ये महिलाएं उस वन देवी नामक महिला स्वयं सहायता समूह की सदस्य हैं जिसने यहां की सामाजिक स्थिति को बदल कर रख दिया है।

ये महिलाएं ढेर सारे महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा कर रही हैं। इन विषयों में प्रजनन स्वास्थ्य, संस्थागत प्रसव, स्तनपान, पोषण, सफाई, बाल विवाह और बालिका

नवटोलिया में प्रसव-पूर्व देखरेख कभी भी लोगों की प्राथमिकता नहीं रही। प्रसव घर पर ही कराये जाते थे और मातृ मृत्यु दर काफी अधिक थी। टीकाकरण को ऐसा माना जाता था कि उससे बच्चे बीमार पड़ जायेंगे, बाल विवाह एक सामान्य बात थी और शिक्षा को महत्व नहीं दिया जाता था।

शिक्षा जैसे विषय शामिल हैं। इनमें से एक भी महिला कभी स्कूल नहीं गई। कुछ साल पहले तक जिन्होंने घरेलू या कृषि कार्य के अलावा किसी और काम के लिए घर से बाहर कदम नहीं रखा था, उन्होंने ही आज एक ऐसा सफल और सक्रिय समूह बनाया है जिसने न केवल उनकी बस्ती में, बल्कि आस–पास के गांवों में भी सामाजिक और व्यवहार संबंधी आदतों और दृष्टिकोणों को बदल कर रख दिया है।

इसकी शुरूआत तब हुई जब वन देवी संस्था से पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना के अंग के रूप में बाल अधिकारों के लक्ष्य को आगे बढ़ाने के एक मंच के रूप में चुना गया। इस परियोजना के अंतर्गत 15 सदस्यों को बाल अधिकारों से संबंधित ज्ञान, कौशल और समझ प्रदान करने का कार्य किया गया।

लोगों को उनकी पहले की सोच से अलग करना, परम्पराओं को चुनौती देना, बहुत सारी गलत धारणाओं और भ्रम को दूर करना कोई आसान काम नहीं था। नवटोलिया और पड़ौस के गांवों में अधिकतर अन्य पिछड़ा वर्ग, और अनुसूचित जातियों की आबादी रहती है। यहां के पुरूष या तो पत्थर खदानों में काम करते हैं या फिर खेती करते हैं। प्रसव–पूर्व देख–रेख यहां किसी की भी प्राथमिकता नहीं रही थी। प्रसव घर पर ही कराया जाता था और मातृ मृत्यु दर काफी अधिक थी। टीकाकरण को ऐसे माना जाता था मानों कि बच्चे बीमार पड़ जायेंगे। मां का पहला गाढ़ा दूध (कोलस्ट्रम) "धरती माता" को दिया जाता था यानी उसे फेंक दिया जाता था। लड़कियों की शादी छोटी उम्र में ही कर दी जाती थी और 15–16 की होते–होते वे मां बन चुकी होती थीं। शिक्षा किसी की प्राथमिकता नहीं थी जबकि सरकारी स्कूल बिल्कुल पास में ही था।

इसलिए वन देवी संस्था की महिलाओं ने महसूस किया कि विकास के लिए उन्हें बहुत से काम करने की जरूरत है। ईस्वरी देवी ने बताया "हम में से हर एक ने 10 परिवारों में बदलाव लाने की जिम्मेदारी ली। नया ज्ञान प्राप्त करके हम लोगों को शिक्षित करने और समझाने के लिए और बदलाव लाने के लिए नवटोलिया में विस्तार से काम पर जुट गये। हमने खुद मिसाल कायम की। संस्था की सदस्य, सुखवाड़ी ने अपनी बच्ची का प्रसव प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में कराया। आज उसकी पोती 2 साल की हो गई है और उसका पूरा टीकाकरण हो चुका है।

अगला कदम था उन महिलाओं को शामिल करना जिन्होंने अपने व्यवहार में बदलाव लाया जैसे कि प्रसव–पूर्व देख–रेख और प्रसव के बाद की देख–रेख प्राप्त करना, बच्चों का टीकाकरण करवाना और बच्चे के जन्म के 6 महीने तक उसको केवल स्तनपान कराना। बदलाव लाने वाली महिलाओं की श्रृंखला में ये महिलाएं एक कड़ी बन गई और उन्होंने बहुत से और लोगों को

गृह भेंट के दौरान, महिला समूह की सदस्यों ने व्यवहार परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई

प्रभावित किया। फिर सरकारी स्कूल को इस सकारात्मक बदलाव का केन्द्र बनाया गया और सलभावना, धावी डोडी, गुडवानी और पटवाडी जैसे आस–पास के गांवों

"हममें से हरेक ने दस परिवारों में बदलाव लाने की जिम्मेदारी ली। अपने नये-नये प्राप्त ज्ञान के साथ हम शिक्षित करने, समझाने, राजी करने और बदलाव लाने के लिए नवटोलिया में फैल गये।"

ईश्रावती देवी,
महिला समूह की सदस्य, नवटोलिया

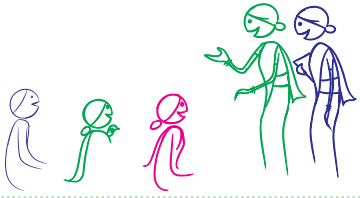

में वनदेवी के सदस्यों द्वारा आयोजित बैठकों और विचार–विमर्शों में वहां आने लगीं।

आज नवटोलिया और उसके आस–पास के गांवों की स्थिति बदल चुकी है। अब यहां प्रसव से पहले और प्रसव के बाद की देख–रेख को जरूरी माना जाता है। आज स्थिति यह है कि पिछले दो वर्षों में गांव में सभी प्रसव पी.एच.सी. में या फिर सीमेंट फैक्ट्री के अस्पताल में कराये गये हैं। एक भी बच्चा ऐसा नहीं जिसका टीकाकरण न कराया गया हो। कॉलेस्ट्रम (मां का पहला गाढ़ा दूध) को नवजात शिशु का पहला भोजन माना जाता है। हर शिशु को जन्म के पहले 6 महीनों में केवल स्तनपान कराया जाता है। स्तनों की सफाई को भी अब यहां की महिलाएं गंभीरता से लेती हैं।

छुटकी देवी ने हमें बताया: "हमने यहां लोगों को बच्चों की शिक्षा के महत्व के बारे में समझाने के लिए काफी मेहनत की। उनकी सोच काफी बदल चुकी है, लिंग भेदभाव काफी कम हो गया है।" महिला समूह की युवा सदस्य दीपा ने हमें बताया कि किस–किस तरह उसने अपने ससुर को उनकी 14 साल की बेटी (दीपा की ननद) की शादी तोड़ने के लिए मनाया।

समुदाय की लामबंदी और सामूहिक कार्यवाई की वजह से ही आज नवटोलिया की महिलाएं सामाजिक बदलाव की नेता बन पायी हैं। दोनों में हर जगह वनदेवी संस्था की कोशिशों के प्रभाव को देखा जा सकता है और इससे यह आशा जगती है कि ये समुदाय इस बदलाव को बनाये रखेंगे और आगे बढ़ायेंगे।

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता गांव की महिलाओं को उनके टीकाकरण कार्ड भरने में मदद करती हैं

रोगों को रोकने वाले प्रहरी

गोसाईपुर में बाल संरक्षण संगठनों और स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं ने बच्चों तथा माताओं के लिए जीवनरक्षक टीकाकरण सेवाएं प्राप्त कीं

गांव की आंगनवाड़ी कार्यकर्ता अर्चना पाठक अपने बरामदे में गिरती बारिश की बूंदों को देखती हुई विचारमग्न भाव से कहती हैं, "अगर बारिश समय पर नहीं आयेगी तो फसलें नहीं उगेंगी। इसी तरह अगर बच्चों को सही समय पर टीके नहीं लगाये जायेंगे तो उन्हें जानलेवा रोग होने का खतरा बना रहेगा।" अर्चना के ये शब्द जौनपुर जिले के रायपुर ब्लॉक के गोसाईपुर गांव के मामले में बिल्कुल सच हैं।

गोसाईपुर गांव में यादव, बढ़ई, माली और तेली जैसे अन्य पिछड़े वर्ग के समुदाय रहते हैं। अभी हाल ही तक यहां टीकाकरण के आंकड़े निराशाजनक थे। इसके कई कारण थे जैसे कि पर्याप्त सेवाएं प्रदान न किया जाना, जागरूकता का अभाव, गलत धारणाएं और भ्रम। इसकी एक वजह थी गांव की निरक्षरता दर जो 70 प्रतिशत थी। इसके अलावा इसके दूसरे कारण भी थे। गांव तक पहुंचने वाली सड़कों में पानी जमा

सेवा प्रदायगी की निम्न स्थिति, जागरूकता के अभाव और कई भ्रामक धारणाओं की वजह से गोसाईपुर गांव में टीकाकरण की कवरेज काफी निराशाजनक थी।

होने और गड्ढों की वजह से गांव से आना–जाना मुश्किल भी था। जिससे टीकाकरण सेवाएं अस्त–व्यस्त थीं। इसका बच्चों की स्थिति पर बुरा प्रभाव पड़ा और वे रोके जा सकने वाले बचपन के रोगों से असुरक्षित हो गये।

इस मामले को सी.पी.सी. और महिला समूह ने जोश–खरोश के साथ अपने हाथ में लिया और गांव के समुदाय में भी यही उत्साह दिखाई दिया। समुदाय के लोग स्वास्थ्य केन्द्रों और आंगनवाड़ी केन्द्रों में उपलब्ध निम्न प्रकार की सेवाओं से निराश हो चुके थे। लोगों की आम शिकायत यह थी कि टीके उपलब्ध नहीं होते थे। सी.पी.सी. और महिला समूह की सहायता से अर्चना ने वैक्सीनों की नियमित सप्लाई के लिए सी.डी.पी.ओ. के पास आवेदन किया। बाल संरक्षण संगठनों ने ए.एन.एम. को प्रेरित किया कि वह नियमित रूप से गांव जाये और बच्चों के साथ गर्भवती तथा स्तनपान कराने वाली माताओं का टीकाकरण करें। गांव के प्रधान ने भी – जो कि एक गतिशील नेता हैं – आगे बढ़कर साथ दिया और व्यापक समर्थन जुटाया। इधर सी.पी.सी. के सदस्यों के साथ मिलकर अर्चना ने टीकाकरण के बारे में समुदाय के सदस्यों की जागरूकता को बढ़ाने का काम जारी रखा, लोगों को इसके लाभों के बारे में बताया और इस संबंध में मौजूद भ्रमों को दूर किया।

टीकाकरण की मांग और आपूर्ति को बढ़ाने वाले इस ठोस और मिले–जुले प्रयास के आश्चर्यजनक परिणाम सामने आये। इस समय गोसाईपुर में सभी बच्चों का टीकाकरण हो चुका है और सभी माताओं के पास एम.सी.पी. कार्ड है।

गोसाईपुर गांव में बच्चों का अब नियमित रूप से टीकाकरण होता है

गोसाईपुर की आंगनवाड़ी कार्यकर्ता गांव की महिलाओं को आपसी तालमेल द्वारा सरकारी सुविधाओं के बारे में परामर्श देती हैं

एक महिला समूह की सदस्य, इंद्रवती देवी ने गर्व के साथ अपना एम.सी.पी. कार्ड दिखाया जिसका भली–भांति उपयोग किया गया है। उनके लिए यह कार्ड टीकाकरण संबंधी और अन्य ऐसी स्वास्थ्य सेवाएं प्राप्त करने की कुंजी है जो उसके बच्चों की सुरक्षा और स्वास्थ्य के लिए जरूरी है।

अब आशा और ए.एन.एम. नियमित रूप से घर–घर जाकर सेवाएं प्रदान करती हैं और परिवारों को पोलियो के चक्रों तथा अन्य टीकाकरण शिविरों की जानकारी देती हैं। वे एम.सी.पी. कार्ड दर्ज जानकारी पर ध्यानपूर्वक नजर रखती है। अब इस ग्राम पंचायत सभा में सभी गांवों को हर दो महीने में आयोजित टीकाकरण अभियान के अंतर्गत शामिल कर लिया गया है।

> ए.एन.एम. द्वारा घरों के दौरे करने, वैक्सीनों की आपूर्ति और एम.सी.पी. कार्ड की प्रविष्टियों की मॉनिटरिंग को नियमित किया गया। पोलियो के चक्रों और टीकाकरण कार्यक्रमों की पहले से घोषणा की गई।

टीकाकरण को बढ़ावा देने के इन सामूहिक प्रयासों की सफलता सी.पी.सी. और महिला समूह की सदस्यों के लिए सिर्फ एक शुरूआत है। वे उत्साहपूर्वक मुद्दों को हल करने की योजना बना रहे हैं जैसे कि स्कूल और पंचायत भवन का निर्माण। सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के साथ मिलकर अब वे गोसाईपुर में बच्चों और माताओं के जीवन में सुधार लाने के प्रति वचनबद्ध हैं।

बाल विवाह से बच्चों की हुई रक्षा

यह एक ऐसे दृढ़ संकल्प वाले जागरूक समुदाय की कहानी है जिसने अपने गांव में बाल विवाह की घटनाओं पर रोक लगाई

कराड के सी.पी.सी. सदस्यों ने एक ऐसी रणनीति अपनाई जिससे एक बाल विवाह रोका गया

यह बात सन् 2014 की गर्मियों की है। सोनभद्र जिले के चतरा ब्लॉक के एक गांव में 19 साल के लड़के की शादी होने जा रही थी, पर विभिन्न समुदाओं के व्यक्तियों के एक छोटे समूह ने इस शादी के खिलाफ आंदोलन छेड़ दिया। इस गांव में जहां बाल विवाह को सामाजिक रूप से मंजूरी प्राप्त थी यह कुछ अजीब सी बात थी। इसके बाद जो हुआ वह ऐतिहासिक घटना है!

यह समूह और कोई नहीं बल्कि बाल संरक्षण समिति (सी.पी.सी.) थी जो बच्चों के अधिकारों को लेकर काम कर रही थी। बाल विवाह को इस क्षेत्र का एक

कराड के युवाओं ने भी सक्रिय रूप से बाल विवाह की प्रथा का अंत करने में समर्थन दिया

कराड की ग्राम प्रधान, माधुरी ने होने वाले दूल्हे के घर के बाहर धरने में भाग लिया

गंभीर मुद्दा नहीं माना जाता था। सी.पी.सी. द्वारा आयोजित किये गये एक खुले विचार–विमर्श के दौरान जिसमें गांव के लोग भाग लेते हैं, 19–वर्षीय लड़के के विवाह का उल्लेख किया गया था।

इस समूह के 22–वर्षीय धर्मेन्द्र कुमार ने बताया "हमने इस बात पर चर्चा की कि लड़का अभी वयस्क नहीं हुआ है। फिर पता चला कि वह लड़की जिससे उसकी शादी होने जा रही है वह मात्र 16 साल की है।"

सी.पी.सी. ने पहले लड़के के रिश्तेदारों से जानकारी की पुष्टि की। फिर सर्वसम्मति से यह फैसला किया गया कि इस मामले को हाथ में लिया जाना चाहिए और सभी सदस्य लड़के के घर जाकर उसके माता–पिता से मिलेंगे। उन्हें कानूनी उम्र से पहले बच्चों की शादी कराने के नुकसानों के बारे में बताया गया। धर्मेन्द्र ने याद करते हुए कहा कि, "हमने उन्हें समझाया कि छोटी उम्र में शादी का बच्चों की शिक्षा और शारीरिक तथा भावनात्मक विकास पर क्या प्रभाव पड़ता है।"

पर इस बैठक में लड़के के माता–पिता को शादी रद्द करने या कानूनी उम्र का होने तक बच्चों की शादी को टालने तक के लिए राजी नहीं किया जा सका। गांव की ग्राम प्रधान माधुरी ने बताया कि, "लड़के के पिता बीमार थे और उन्हें डर था कि वे लड़के की शादी होते देखने के लिए शायद जिंदा न रह पायें। एक 16 साल की लड़की को घर लाकर बहू बनाने में उन्हें कुछ अनुचित नहीं लगा।"

"हमने उस बच्चे के मामले पर चर्चा की जिसकी शादी होने वाली थी। अभी कानूनी रूप से उसकी शादी की उम्र नहीं हुई थी और जिस लड़की से उसकी शादी होने जा रही थी वह मात्र १६ वर्ष की थी।"

धर्मेन्द्र कुमार,
सी.पी.सी. सदस्य, कराड

इसके बाद सी.पी.सी. ने महिला समूह के साथ बैठक की। आशा कार्यकर्ता उर्मिला ने हमें बताया कि, "हमने लड़के के घर के आगे तब तक धरना देने का फैसला किया जब तक शादी रोक नहीं दी जाती।"

उसने याद करते हुए कहा कि "पहले दिन हमने 6 घण्टे धरना दिया और यह सिलसिला अगले दिन तक जारी रखा। परिवार ने हमारी कार्रवाई को रोकने के लिए ऐसे–ऐसे काम किये कि जो हम सोच भी नहीं सकते।"

धर्मेन्द्र ने हामी भरते हुए कहा कि, "वे अपने घर तक जाने वाले रास्ते पर पानी डाल देते थे ताकि वहां कीचड़ हो जाये। हमारे लिये उनके घर तक पहुंचना मुश्किल हो गया। उन्होंने अपने घर में चारों ओर गोबर फैला दिया ताकि हम वहां खड़े भी न हो सकें, पर हमने हिम्मत नहीं हारी।"

आशा की किरण तब जागी जब लड़के के बड़े भाई ने – जिसकी शादी भी बचपन में कर दी गई थी – शादी को स्थगित करने के लिए सी.पी.सी. के फैसले का साथ दिया। उसने अपने माता–पिता और परिवार के सदस्यों को समझाया कि छोटी उम्र में शादी करने पर किस तरह उस पर जिम्मेदारियों का बोझ पड़ गया था। उसके पिता ने उसकी बात तो समझ

सी.पी.सी. ने बाल विवाह न कराने के बारे में परिवार को परामर्श दिया पर जब इसका कोई असर नहीं हुआ तो उन्होंने लड़के के घर के बाहर धरना दे दिया। ऐसा इस क्षेत्र में पहले कभी नहीं हुआ था। उन्होंने होने वाली वधू-जो अभी किशोरी थी -के परिवार को भी परामर्श दिया।

लिया पर वे अपने फैसले पर अड़े रहे क्योंकि उन्होंने निमंत्रण पत्र छपवाने पर पैसे जो खर्च कर दिए थे। इसके अलावा लड़की के परिवार वाले उनसे उपहार भी ले चुके थे।

जल्दी ही यह खबर लड़की के गांव पहुंच गई। सी.पी.सी. के सदस्य लड़की के परिवार वालों से मिलने गये और उन्हें बाल विवाह के नुकसानों तथा उसके कानूनी पहलूओं के बारे में समझाया। आखिर लड़की के परिवार ने शादी तोड़ दी।

सी.पी.सी. के दृढ़ संकल्प और प्रयासों की आखिरकार जीत हुई। आज कराड गांव में बाल विवाह को जरा भी मंजूरी प्राप्त नहीं है। पड़ोसी गांवों से भी बाल विवाह का एक भी मामला सामने नहीं आया है और समुदाय एक तरह से पहरेदार का काम कर रहा है।

बचपन की वापसी

गरीब आदिवासी परिवार के बच्चे की दिल को छू लेने वाली कहानी जिसे कठोर, शारीरिक श्रम के जीवन से बचाकर उस दुनिया में लाया गया जहां वह अपने अधिकारों का उपयोग कर सकता है

सर्दियों की कड़कड़ाती शाम थी। सुनीता सेवका दाध गांव के बाजार के एक ढाबे में चाय पीने के लिए पहुंची। उसने अपना दिन का काम पूरा कर लिया था और घर वापस जाने वाली थी। सुनीता ने देखा कि एक छोटा सा बच्चा उसके लिए चाय लेकर आया था; उसे आश्चर्य हुआ। सुनीता ने बच्चे का नाम पूछा तो उसने जवाब दिया – "कमलेश"। उसके परिवार के बारे में पूछा तो उसने बताया कि वह अपने नाना, मां, तीन छोटे भाई–बहनों, मौसा और मौसी के साथ पड़ोस के गांव हथयार में रहता है। ढाबे के मैनेजर ने जब यह सुना तो सुनीता को बताया कि कमलेश 13 साल का है और उसके पिता उसकी मां को छोड़कर चले गये। वह फैक्ट्री में मजदूर है और पूरे घर का खर्चा वही चलाती है।

कमलेश, जिसे बाल मजदूरी से बचाया गया, अब एक स्थानीय प्राथमिक विद्यालय का छात्र है

जब सुनीता ने कमलेश से पूछा कि, "क्या तुम स्कूल जाना चाहोगे?" कमलेश मुस्कुराया। ''मैं इतवार को तुम्हारी मां और नाना से मिलने आऊंगी'', यह कहकर सुनीता ने कमलेश के घर का पता लिख लिया।

म्योरपुर ब्लॉक के गांवों में अधिकतर अनुसूचित जनजाति के लोग रहते हैं। यहां निरक्षरता और गरीबी का बोलबाला है जिसकी वजह से बच्चों को मजदूरी करने को मजबूर होना पड़ता है। हथयार में 196 घरों में से 127 परिवार अनुसूचित जनजाति समुदाय के हैं। कमलेश निर्धन गोंड आदिवासी समुदाय का है। उसके परिवार के बड़े लोगों में कोई भी पढ़ा–लिखा नहीं है।

"कमलेश ने स्कूल छोड़ दिया था और वह दो महीने से एक ढाबे में काम कर रहा था। वह सर्दियों में भी पूरे दिन ठंडे पानी से बर्तन धोता था। उसके पैरों में चप्पल-जूते कुछ नही थे और उसने सर्दी के कपड़े भी नही पहने थे।"

द्वारिका प्रसाद,
ग्राम प्रधान, हथयार

सुनीता असल में पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना की कार्यकर्ता थी। उसने सेवका दाध और हथयार की सी.पी.सी. से संपर्क किया और उन्हें कमलेश की दुर्दशा के बारे में बताया। हथयार के ग्राम प्रधान, द्वारिका प्रसाद ने बताया कि, "हमें पता चला है कि यह लड़का स्कूल छोड़ चुका है और दो महीने से ढाबे में रहकर काम कर रहा है। वह बेचारा सर्दियों के समय भी ठंडे पानी से बर्तन धोने का काम करता था। उसके पांवों में चप्पल–जूते तक नहीं थे और न ही वह स्वैटर जैसे सर्दियों के कपड़े पहने हुए था। हमने फैसला किया कि हमें कुछ करना होगा तथा उसका पुनर्वास कराना होगा।"

सेवका दाध और हथयार के ग्राम प्रधानों तथा सी.पी.सी. के सदस्यों के साथ सुनीता जल्दी ही कमलेश के घर पर गई। एक सी.पी.सी. सदस्य धनसाहा ने बताया कि, "हमने उसकी मां और नाना से बात की। उन्हें बताया कि बच्चे को कैसी कठिन स्थितियों में काम करना और जीना पड़ता है। हमने परिवार को उसके अधिकारों के बारे में भी बताया। उन्हें यह जानकारी भी दी कि कानून के अनुसार बाल मजदूरी पर प्रतिबंध है और आपके पूरे परिवार को इसके लिए सजा मिल सकती है।" सी.पी.सी. ने कमलेश की मां से यह वायदा करवाया कि वह उसे अगले ही दिन सेवका दाध से वापस ले आयेगी।

अगले ही दिन कमलेश की मां उसे वापस घर ले आई। फिर सी.पी.सी. ने एक बैठक आयोजित की जिसमें गांव के सभी वयस्क लोगों को बुलाया गया था। बैठक में कमलेश के मामले पर विचार–विमर्श किया गया और बच्चों के अधिकारों की जानकारी दी

कमलेश के पुनर्वास के बाद, हथयार गांव की सी.पी.सी. और एस.एम.सी. ने बैगा जनजाति के 53 बच्चों को स्कूल में भर्ती कराया।

गई। बैठक में यह फैसला किया गया कि कमलेश को पास के प्राथमिक स्कूल में भर्ती कराया जायेगा। गांव के लोगों ने यह शपथ ली कि वे किसी भी बच्चे को ऐसी मुसीबत से नहीं गुजरने देंगे जैसी मुसीबत कमलेश ने झेली है।

आज कमलेश कक्षा 5 का छात्र है। वह नियमित रूप से स्कूल जाता है और स्कूल के कार्यकलापों में भाग लेता है। उसके छोटे भाई–बहन भी उसी के कदमों पर चल रहे हैं और स्कूल में पढ़ रहे हैं। कमलेश का मामला सामने आने के बाद वर्ष 2014 में हथयार की सी.पी.सी. और एस.एम.सी. ने बैगा जनजाति के 53 बच्चों को स्कूल में भर्ती करवाया। बैगा जनजाति एक सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़ा समुदाय है जो गरीबी की हालत में जी रहा है।

एस.एम.सी. के अध्यक्ष, राम लखन का कहना है कि, "हम हर बच्चे के घर गये और उनके माता–पिता को समझाया कि बच्चों को पढ़ने के लिए स्कूल भेजें।" ये 53 बच्चे इस बात के गवाह है कि समुदाय में बच्चों के अधिकारों की रक्षा कर और उन्हें सम्मानपूर्ण जीवन प्रदान करने के लिए नया उत्साह जागा है।

निर्धन बच्चों को शिक्षा का अधिकार

महिला समूह के सक्रिय हस्तक्षेप से निर्धन समुदाय के बच्चों को भेदभाव से बचाकर उन्हें शिक्षा प्रदान की गई

मुसाहर समुदाय की बस्ती में पहुंचने का रास्ता कीचड़ और गंदगी से भरा हुआ है और यहां तक पहुंचना भी मुश्किल लगता है। यह बस्ती भौगोलिक और सामाजिक रूप से एक द्वीप बनी हुई है यानी कि यह एक अलग–थलग इलाका है।

मुबारकपुर गांव रॉबर्ट्गंज से 26 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। रॉबर्ट्गंज सोनभद्र जिले का मुख्यालय है। पर इस बस्ती में 30 मुसाहर समुदाय के परिवार रहते हैं। केवल खेलते–कूदते बच्चे ही इस बस्ती का जीवन है। स्कूल और पढ़ाई इन बच्चों के जीवन का अंग नहीं है। वे दूसरे गांव के बच्चों को यूनिफॉर्म पहने स्कूल जाते हुए देखते थे। दूर से ही ये गरीब बच्चे यह देखते थे कि स्कूल के बच्चे इतने बड़े मैदान में किस तरह दौड़ रहे थे और खेल रहे थे।

मुसाहर (जिसका शाब्दिक अर्थ है 'चूहे खाने वाले') एक ऐसा समुदाय है जिसे पारंपरिक रूप से दलितों में भी सबसे निम्न माना जाता था। ऐतिहासिक रूप से वे सामाजिक बहिष्कार और भेदभाव के शिकार रहे हैं। ये भूमिहीन कृषि मजदूर हैं और बहिष्कृतों की तरह गांवों के बाहरी क्षेत्रों में रहते हैं।

दुर्गा महिला मंडल की एक सदस्य लीलावती का कहना है, "मई 2013 में हमारे समूह की एक बैठक के दौरान मुसाहर बस्ती के बच्चों की अनुपस्थिति का मुद्दा उठाया गया; इसका कारण जानना जरूरी था। हमने सक्रियता से इस मुद्दे पर काम करने का फैसला किया।" पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना के अंग के रूप में गांव में एक महिला समूह का गठन किया गया। दुर्गा महिला मंडल के सदस्य मुसाहर बस्ती में गयीं और उन्होंने समुदाय के साथ विस्तार से विचार–विमर्श किया।''

बच्चों के माता–पिता ने महिला समूह की सदस्यों को बताया कि एक समय था जब उनके बच्चे पास के सरकारी प्राथमिक स्कूल जाते थे, पर उनके साथ

> स्कूल में मौखिक और शारीरिक दुर्व्यवहार के रूप में जातिगत भेदभाव की वजह से मुसाहर समुदाय के बच्चों के मन में डर बैठ गया और पढ़ाई से उनका मन हट गया तथा शीघ्र ही उन्होंने स्कूल जाना बंद कर दिया।

अन्य जातियों और समुदायों के बच्चे नियमित रूप से दुर्व्यवहार, हिंसा और भेदभाव करते थे। तीन भाइयों – ब्रज मोहन, लाल मोहन और बबलू – की चाची पार्वती ने बताया, "स्कूल आते–जाते गांव के लड़के हमारे छोटे–छोटे बच्चों को मारते–पीटते थे। हमें हर समय डर बना रहता था। वे चोट खाकर और घायल होकर घर आते थे।"

एक अन्य महिला रीता – जिसके भांजे रोहित ने स्कूल जाना बंद कर दिया है – ने समस्या को इस तरह प्रस्तुत किया, "जब हम मार पिटाई करने वाले बच्चों के माता–पिता के पास उनकी शिकायत करते तो वे हमें और भी धमकाते थे।"

दुर्गा महिला मंडल ने 19 बच्चों को प्राथमिक स्कूल में दाखिला दिलाया। उन्होंने गांव के लोगों को बच्चों के अधिकारों, कमजोर वर्ग के बच्चों के खिलाफ हिंसा और जातिगत भेदभाव के बारे में भी समझाया।

परेशान बच्चों के माता–पिता ने बताया कि किस तरह स्कूल में भी मौखिक और शारीरिक दुर्व्यवहार के रूप में जातिगत भेदभाव मौजूद था। इससे बच्चों के मन में डर बैठ गया, पढ़ने में उनकी दिलचस्पी नहीं रही और उन्होंने स्कूल जाना बंद कर दिया।

मुबारकपुर महिला समूह के सदस्यों ने सामाजिक रूप से बहिष्कृत समुदाय के बच्चों की स्कूल में उपस्थिति को बढ़ावा देने में मदद की

लीलावती ने बताया, "यह बड़ी दुखद हालत थी। शिक्षा के बिना बच्चों को अपने माता–पिता और समुदाय की निरक्षरता तथा गरीबी अपने आप विरासत में मिल रही थी। हमें मालूम था कि हमें कुछ करना ही होगा।"

इसके बाद महिला समूह मुबारकपुर के सरकारी प्राथमिक स्कूल पहुंचा और वहां के एक शिक्षक रमाकांत से इस संबंध में बात की। रमाकांत जी ने भरोसा दिलाया कि अगर बच्चों को फिर से स्कूल में दाखिला दिलाया जाये तो वे यह निश्चित करेंगे कि उनके साथ भेदभाव और दुर्व्यवहार न किया जाये। समुदाय के बीच भी बैठक आयोजित की गई जिसमें गांव के सभी लोगों को बुलाया गया। बैठक में बाल अधिकारों, कमजोर वर्ग के बच्चों के साथ हिंसा और जातिगत भेदभाव पर विचार किया गया। इन कदमों से समुदाय को जागरूक बनाने में मदद मिली।

जुलाई 2013 में दुर्गा महिला मंडल की सदस्यों ने मुसाहर समुदाय के 19 बच्चों को सरकारी प्राथमिक स्कूल में दाखिला दिलाया और मुफ्त पुस्तकों, यूनिफॉर्म और स्कूल का बस्ता सहित उन्हें उनके सभी अधिकार प्रदान किये गये।

आज बच्चे खुशी उत्साह के साथ बस्ते उठाये स्कूल जाते हैं और मुसाहर समुदाय को इस बात की खुशी है कि उनके बच्चे बिरादरी से बाहर नहीं रहेंगे।

अब मुसाहर समुदाय के बच्चों के लिए स्कूल जाना समस्या मुक्त हो गया है

महिलाओं की संगठित पहल

स्थानीय महिला समूह के सदस्यों ने संस्थागत प्रसव के व्यवहार को अपनाने और बढ़ावा देने के लिए कदम उठाये

कुरेथू गांव में मुस्कुराती हुई माधुरी के सामने महिला समूह के सदस्य उसके नवजात बेटे को प्यार से गोदी में उठा रही हैं। माधुरी संस्थागत प्रसव यानी बच्चे को अस्पताल में जन्म देने की मजबूत समर्थक है। उसका कहना है कि "मैंने अपने बच्चे को धर्मपुर ब्लॉक के सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र में जन्म दिया। मेरे पति और मैंने पहले आपस में चर्चा की कि बच्चे को जन्म कहां दिया जाये और फिर अपने माता–पिता से भी सलाह ली। हम इस बात पर सहमत हुए कि डॉक्टर की देखरेख में बच्चे को जन्म देने से मेरा शिशु और मैं जन्म के बाद सबसे अधिक सुरक्षित तथा स्वस्थ रहेंगे।" उसकी इन समझदार बातों को सुनकर समूह की सबसे सख्त और वृद्ध महिलाओं तक ने संस्थागत प्रसव को लेकर हामी भरी।

> पहले कुरेथू गांव की महिलाएं कहा करती थीं - "टीकाकरण की जरूरत क्यों है? हमें इसकी जरूरत नहीं है। हम तो बच्चों का प्रसव सदियों से घर पर ही कराती आ रही हैं।"

गांव की आशा कार्यकर्ता का कहना है कि, "महिला समूह गठन ने सचमुच कुरेथू की महिलाओं के लिए चमत्कार कर दिखाया। पहले वे कहा करती थीं कि टीकाकरण की जरूरत ही क्या है? हमें इसकी जरूरत नहीं है और हम औरतें तो सदियों से बच्चों को घर पर जन्म देती आ रही हैं।"

कुरेथू की लगभग 98 प्रतिशत आबादी अनुसूचित जाति (धरिकर और चमार) और अन्य पिछड़े वर्ग (यादव) की है जबकि 2 प्रतिशत लोग सामान्य वर्ग (सवर्ण) के हैं। यहां की साक्षरता दर 80 प्रतिशत है और अधिकतर लोग खेती करते हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना ने हानिकारक तौर–तरीके छोड़ अधिक सुरक्षित और स्वस्थ तरीके अपनाने की दिशा में बदलाव की शुरुआत की। महिलाओं को उनके जीवन के लिए आवश्यक जानकारी प्रदान की गई और आज वे इस जानकारी के आधार पर फैसले लेती हैं। महिला समूह की बैठकों में महिलाएं नियमित टीकाकरण, आयोडीन युक्त नमक के उपयोग, प्रसव–पूर्व और प्रसव के बाद की देखरेख, गर्भवती महिलाओं द्वारा आई.एफ.ए. की गोलियां लेने आदि जैसे मुद्दों पर चर्चा करती हैं। उन्होंने इस सारी जानकारी

को व्यवहार में भी उतारा है। कुरेथू में एक मुख्य बदलाव यह आया है कि बच्चे का जन्म घर पर नहीं, बल्कि अस्पताल या स्वास्थ्य केन्द्र में कराया जाता है।

कुरेथू की महिलाओं ने संस्थागत प्रसव का विकल्प अनेक लाभों की वजह से चुना है। वे जानती हैं कि गर्भवती माताओं के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों और सरकारी अस्पतालों में बहुत सी सेवाएं प्रदान की जाती हैं जैसे कि आवश्यक दवाइयां, योग्य चिकित्सा कर्मियों द्वारा देखरेख और प्रोत्साहन के रूप में पैसे का भुगतान। उन्होंने यह भी महसूस किया कि घर पर प्रसव कराने के अपने खतरे हैं और अगर प्रसव के दौरान कोई समस्या खड़ी हो जाये तो दाई के लिए उसे हल करना मुश्किल हो सकता है। यह मां और नवजात शिशु के लिए जानलेवा हो सकता है। महिला समूह की एक सदस्य मनपत्ती ने बताया कि, "अगर नियमित डॉक्टरी जांच न कराई जाये तो गर्भवती महिला बीमार पड़ सकती है क्योंकि संक्रमणों का पता नहीं चलेगा और वे गंभीर रोगों का रूप ले सकते हैं।"

"अब महिलाओं ने अस्पताल में प्रसव कराना शुरू कर दिया है और उन्हें नियमित टीकाकरण के बारे में, स्तनपान और जन्म पंजीकरण तथा दूसरी सेवाओं के बारे में जानकारी प्रदान की जाती है।"

रितुबेन बंसी, आशा, कुरेथू

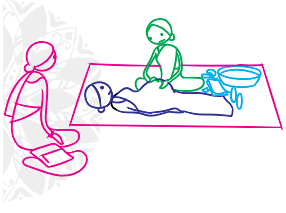

कुरेथु गांव की महिला समूह सदस्य अपने मातृ एवं बाल संरक्षण (एम.सी.पी.) कार्ड को संभाल कर रखते हैं

व्यवहार में परिवर्तन की यह प्रक्रिया पूरे गांव में फैल चुकी है क्योंकि महिला समूह की सदस्यों ने हर महिला और उसके परिवार को संस्थागत प्रसव कराने के लाभों की जानकारी दी थी। बारह सदस्यों में से हर सदस्य ने पांच घरों को परामर्श दिया और इस तरह कुल 60 परिवारों को जानकारी प्राप्त हुई। उनकी कोशिशों का ही परिणाम है कि प्रजनन स्वास्थ्य सुविधाओं तक महिलाओं की पहुंच में सुधार आया है, फिर चाहे उनकी जाति और वर्ग जो भी हो।

इस ग्रामीण समुदाय की महिलाओं ने नियमित टीकाकरण और पोषण तथा एम.सी.पी. कार्डों के लिए आंगनवाड़ी केन्द्र की सेवाओं का नियमित रूप से उपयोग करना शुरु कर दिया है। आशा और ए.एन.एम. स्वास्थ्य तथा पोषण संबंधी सभी कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। माधुरी ने हमें अपना एम.सी.पी. कार्ड दिखाया और कहा कि वह इसे ध्यानपूर्वक रखती है और समय–समय पर आशा से इसे भरवाती रहती है। समुदाय के सभी सदस्यों को गर्भवती महिलाओं के

महिला समूह के सदस्य बैठक करते हैं और गांव की महिलाओं को परामर्श देते हैं

लिए एम्बुलेंस सेवा का सरकारी मोबाइल वैन के नम्बर की जानकारी भी है।

कुरेथू के लोग अब बच्चों के जन्म का पंजीकरण कराने लगे हैं। वे गर्व के साथ दावा करते हैं कि पिछले कुछ सप्ताह के दौरान गांव से ब्लॉक कार्यालय को 36 जन्म पंजीकरण फॉर्म भेजे गये हैं। जागरूकता और बदलाव का एक स्वाभाविक परिणाम यह रहा है कि बच्चों की शिक्षा को महत्व दिया जाने लगा है। अब माता–पिता अपने बच्चों को नियमित रूप से स्कूल भेजते हैं और महिला समूह की जो सदस्य माताएं हैं वे एस.एम.सी. बैठकों में भाग लेती हैं।

कुरेथू में इस परिश्रमी महिला समूह के सराहनीय प्रयासों में यह पता चलता है कि महिलाएं समुदाय में सकारात्मक और प्रगतिशील बदलाव लाने में सक्षम हैं।

अल्पसंख्यक समुदायों की किशोरियां अब के.जी.बी.वी. में शिक्षा प्राप्त कर रही हैं

लड़कियों को मिला समान अवसर

बाल संरक्षण संगठनों और स्कूल के शिक्षकों ने मिलकर मुस्लिम समुदाय की लड़कियों को शिक्षा का अधिकार हासिल कराने के लिए लोगों की मानसिकता में बदलाव लाया

नज़रीन कहती है, "मुझे स्कूल और किताबों से प्यार है। मैं एक शिक्षिका बनना चाहती हूं।" वह कक्षा की सबसे अव्वल दर्जे की छात्रा है। सिर्फ एक साल पहले, शिक्षा उसके लिए एक दूर का सपना था। जमौली गांव की दूसरी लड़कियों की तरह उसे भी स्कूल जाने की इजाजत नहीं थी।

जमौली में कुल 35 मुस्लिम परिवार रहते हैं जो गांव की आबादी के एक तिहाई से कुछ बड़ा हिस्सा हैं। अधिकतर परिवार एक अलग बस्ती में रहते हैं जो चारों ओर से कच्ची सड़कों से घिरी हैं। बस्ती की ऐसी स्थिति को अक्सर माता–पिता लड़कियों के स्कूल न भेजने का कारण बताया करते थे।

माता-पिता का कहना था कि उनकी बस्ती बहुत दूर-दराज की जगह पर स्थित है, इसलिए वे अपनी लड़कियों को स्कूल नहीं भेजते। स्कूल में लड़कियों की सुरक्षा को लेकर भी उनके मन में डर की भावना थी।

14–वर्षीय नज़रीन शांत तरीके से समझाती है, ''मेरे समुदाय में लड़कियों की शिक्षा को महत्वपूर्ण नहीं माना जाता है। उनसे ये अपेक्षा की जाती है कि वे परदे के पीछे रहें और अपनी माता व चाची को घर के काम में मदद करें। मैं स्कूल जाने के सपने देखती थी पर कभी सोचा नहीं था कि वे साकार भी होंगे।"

इस क्षेत्र में सी.पी.सी. ने स्कूल न जाने वाली मुस्लिम लड़कियों के मुद्दे को हाथ में लिया। सी.पी.सी. के सदस्यों ने काफी समय तक और गहराई से इस संबंध में चर्चा की।

सी.पी.सी. के एक सदस्य, अब्दुल बारी ने बताया कि, ''हम चाहते थे कि लड़कियों को के.जी.बी.वी. योजना का फायदा मिले। इस योजना के तहत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्ग से लड़कियों को शिक्षा उपलब्ध कराई जाती है। ये सरकार द्वारा स्थापित आवासीय स्कूल हैं और विशेष रूप से उन बच्चों के लिये हैं जो सबसे नजदीक के स्कूल से दूर छोटी–छोटी छितरी हुई बस्तियों में रहते हैं।''

लेकिन लड़कियों के माता–पिता को समझाना आसान नहीं था। वे कहते थे, "के.जी.बी.वी. हमारी बस्ती से चार कि.मी. दूर है और वहां पहुंचने का रास्ता सुरक्षित नहीं है। हम अपनी लड़कियों को कहीं और रखकर उनकी सुरक्षा को जोखिम में नहीं डाल सकते।''

सी.पी.सी. के एक अन्य सदस्य, सलीम ने कहा, "फिर हमने के.जी.बी.वी. की एक शिक्षिका, सुनीता यादव की सलाह ली।"

अपनी स्थिति को स्पष्ट करते हुए सुनीता ने कहा, "बस्ती के लोग हमारी बात समझना ही नहीं चाहते थे, पर हमने भी कोशिश करना नहीं छोड़ा। उनका कहना था कि उनके समुदाय में घर से बाहर निकलने और किसी जगह पर रहने के लिए लड़कियों को भेजना उनकी परंपरा के खिलाफ है। स्कूल में उनकी हिफाजत कैसे होगी, इसे लेकर भी उनमें आशंकाएं थीं।"

सी.पी.सी. के सदस्यों ने अपनी कोशिश जारी रखी। एक सी.पी.सी. सदस्य शबाना ने बताया, ''बाल कन्या

के.जी.बी.वी. के शिक्षकों ने सी.पी.सी. और महिला समूह के सदस्यों के साथ मिलकर अल्पसंख्यक समुदायों में किशोरियों के माता–पिता को बढ़ावा दिया

आज जमौली गांव के अल्पसंख्यक समुदाय की २० लड़कियां आवासीय स्कूल में पढ़ाई कर रही हैं। उनमें से किसी ने भी बीच में पढ़ाई नहीं छोड़ी है।

के अधिकार और लड़कों तथा लड़कियों के लिये शिक्षा के समान महत्व के बारे में उन्हें जागरूक किया। हमने उन्हें आश्वासन दिया कि के.जी.बी.वी. में शिक्षा मुफ्त प्रदान की जाती है, सुरक्षित है और उसमें कई सुविधाएं हैं।"

जब इन कोशिशों से भी कोई फर्क नहीं पड़ा तो सी.पी.सी. ने गांव के महिला समूह की मदद से बच्चों की माताओं को प्रभावित करने का निर्णय लिया। आने वाले दिनों में सी.पी.सी. और महिला समूह ने मुस्लिम लड़कियों के माता–पिता को के.जी.बी.वी. में खुद आकर देखने के लिये मनाया।

नज़रीन के पिता, मुहम्मद हादिस ने यह माना कि "हम नज़रीन को स्कूल भेजने के लिए तैयार नहीं थे; पर सी.पी.सी. और के.जी.बी.वी. के कहने तथा समझाने पर हम स्कूल गये तथा हमें अच्छा लगा।"

नज़रीन की मां, तस्बीरा को याद है, जब वह अपनी बेटी के स्कूल गई थीं। उन्होंने कहा, "कैंपस और स्कूल की बिल्डिंग काफी बड़ी थी। वहां सभी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध थीं। शिक्षक–शिक्षिकाएं नम्र और सहयोगकारी थे। हमें आश्वासन दिया गया कि हमारी बेटी वहां सुरक्षित रहेगी और हमने उसे भर्ती कराने की सहमति दे दी।"

इस तरह मुस्लिम बस्ती के 11 माता–पिता स्कूल में अपनी लड़कियों को दाखिल करने पर सहमत हो गये। के.जी.बी.वी. के पूर्व वार्डन ने माता–पिताओं के साथ एक बैठक की और उसके बाद लड़कियों को दाखिला मिल गया।

तस्बीरा ने आगे बताया, ''स्कूल ने नज़रीन को पूरी तरह से बदल डाला है। वह और अधिक जिम्मेदार तथा आत्म–विश्वास से भरी है। उसमें परिवर्तन देखने पर, अब दूसरे माता–पिता ने लड़कियों को के.जी.बी.वी. में दाखिल करना शुरू कर दिया।"

इस समय इस बस्ती की 20 लड़कियां के.जी.बी.वी. में पढ़ रही हैं। अब तक किसी भी लड़की ने स्कूल नहीं छोड़ा। स्कूल के शिक्षक–शिक्षिकाओं का कहना है कि इन लड़कियों ने कम समय में पढ़ाई में जो प्रगति की है उससे उन्होंने कमजोर वर्ग वाले समुदायों और क्षेत्रों की और ज्यादा लड़कियों को स्कूल में दाखिला देना शुरू कर दिया है। जमौली की मुस्लिम लड़कियों की यह कहानी आशा और विश्वास की प्रतीक है।

महिलाओं का बढ़ता नेतृत्व

गंगौली गांव के महिला और बाल संरक्षण संगठनों ने स्थानीय सरकारी स्कूल में मध्यान्ह भोजन योजना के कार्यान्वयन में अनियमितताओं को दूर करने का काम हाथ में लिया

कठिन वक्त हमेशा नहीं रहता, पर दृढ़ निश्चय वाले लोग रहते हैं। जौनपुर जिले के सुइथाकलान ब्लॉक में गंगौली गांव की महिलाओं ने यह बात सच करके दिखाई है। इस छोटे से समूह ने हाल ही में अपने बच्चों के लिए लड़ाई लड़ी और उसमें जीत भी हासिल की।

गंगौली में अधिकतर लोग खेती का काम करते हैं। गांव में सामान्य जातियों और अनुसूचित जातियों के लोग रहते हैं। यहां अनुसूचित जातियों के अनेक परिवार गरीबी से जूझ रहे हैं और अपने बच्चों को शालीन जीवन प्रदान करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

सरकारी प्राथमिक स्कूल और आंगनवाड़ी केन्द्र उनकी बस्तियों से कुछ दूरी पर हैं। प्राथमिक स्कूल में लगभग 60 बच्चे पढ़ते हैं। स्कूल में बच्चों की उपस्थिति का स्तर काफी अच्छा है। एक सहायक शिक्षक रामकृष्ण दुबे ने बताया कि, "अच्छी उपस्थिति का कारण मध्यान्ह भोजन दिया जाना है।"

"पिछले दो महीनों से स्कूल में मध्यान्ह भोजन नहीं बनाया गया था क्योंकि खाने-पीने के सामान की आपूर्ति के लिए निधियां जारी नही की जा रही थी।"

राजेश, सी.पी.सी. सदस्य, गंगौली

गंगौली गांव के प्राथमिक विद्यालय में अब नियमित रूप से मध्याह्न भोजन दिया जाता है

सी.पी.सी. के सदस्य मनजीत कुमार ने स्पष्ट किया कि, "कई माता–पिता अपने बच्चों को स्कूल इसलिए भेजते हैं कि वहां शिक्षा के अलावा उन्हें भोजन, पुस्तकें, यूनिफॉर्म और वजीफा मिलता है। जो लोग नाम भर की कृषि आय से गुजारा चला रहे हैं, वे इन सुविधाओं का खर्च नहीं उठा सकते थे। ऐसा करना पड़ता तो वे बच्चों को स्कूल भेजते ही नहीं।"

पर एक साल पहले तक यहां सब कुछ अच्छा नहीं था। प्राथमिक स्कूल के प्रधानाध्यापक वीरेन्द्र सिंह ने याद करते हुए कहा कि, "महीनों तक मध्यान्ह भोजन तैयार नहीं किया जाता था। अक्सर बच्चों की भूख के मारे बुरी हालत हो जाती थी और वे कक्षा में पढ़ाई पर ध्यान नहीं दे पाते थे तथा पढ़ने में उनकी दिलचस्पी कम हो गई थी।"

महिला समूह की सदस्य, मंजू ने बताया कि, "चिंता की दूसरी बात यह थी कि बच्चे स्कूल के समय के दौरान खाना खाने घर भाग जाते थे।"

इससे स्कूल में शिक्षा के स्तर पर बुरा असर पड़ा और छात्रों की उपस्थिति कम होने लगी।

महिला समूह की एक नियमित बैठक के दौरान इस मुद्दे को उठाया गया। सी.पी.सी. के सदस्य राजेश ने बताया कि, "स्कूल में दो महीने से मध्यान्ह भोजन इसलिए नहीं बनाया जा रहा था क्योंकि अधिकारियों ने भोजन–सामग्री खरीदने के लिए निधि जारी नहीं की थी।"

आखिर महिला समूह और सी.पी.सी. के सदस्य समस्या की तह तक पहुंचे और उन्होंने पाया कि गांव का चुना

गंगौली गांव की आंगनवाड़ी कार्यकर्ता मध्याह्न भोजन की मात्रा और गुणवत्ता की जांच करती है

हुआ नेता, ग्राम प्रधान ही खुद निधियों को रोके हुए था। उससे मिलने पर उसने साफ इंकार कर दिया कि निधियों को जारी करने में कोई देरी की जा रही है।

इसके बाद महिला समूह ने गांव के लोगों को एकजुट करके तहसील और ब्लॉक के अधिकारियों के पास प्रधान के खिलाफ लिखित रूप में शिकायत दर्ज कराई। शिकायत की एक फोटोकॉपी प्रधान को भी दी गयी। प्रधान डर गया कि अब ब्लॉक अधिकारी और गांव वाले उसके खिलाफ कार्यवाई करेंगे, उसने तत्काल प्राथमिक स्कूल में मध्यान्ह भोजन बनाने के लिए निधियां जारी करने के आदेश जारी कर दिये।

गंगौली गांव के लोगों की इस सामूहिक कार्यवाही ने सकारात्मक बदलाव का सिलसिला शुरू कर दिया। न केवल मध्यान्ह भोजन बनाने और उसे बांटने का काम नियमित रूप से किया जाने लगा, बल्कि खाद्य सामग्री की पर्याप्त सप्लाई सुनिश्चित की गई ताकि बच्चों को गर्म और पोषक भोजन दिया जा सके। इसके अलावा

जब से निधियां समय पर जारी होने लगीं, तब से खाना तैयार करने और उसका वितरण करने का काम नियमित हो गया है।

बच्चों के लिए खाना पकाने और परोसने के लिए दो रसोइयों की नियुक्ति भी की गई।

स्कूल के अधिकारियों ने इस बात की पुष्टि की कि अब पढ़ाई में बच्चों की रुचि बढ़ गयी है। वीरेंद्र सिंह ने बताया कि, "अब हर रोज बच्चों को स्कूल में स्वादिष्ट खाना मिलता है और वे कक्षा में मन लगाकर पढ़ सकते हैं और स्कूल आना चाहते हैं।"

महिला समूह के हस्तक्षेप और सी.पी.सी. द्वारा प्रदान की गई सहायता ने बदलाव और सुधार लाने की एक

मध्याह्न भोजन रसोइयों को सी.पी.सी. और महिला समूह के प्रयासों द्वारा नियुक्त किया गया

अनूठी ताकत को तथा सामूहिक कार्यवाई की सफलता को दर्शाया है।

शिक्षा के सपने हुए साकार

यह कहानी बताती है कि महिला चैम्पियन ने किस तरह एक 10-वर्षीय लड़की को बाल मजदूरी से बचा कर पढ़ने-लिखने का अवसर दिया

अपने घर की खिड़की से उषा बड़ी लालसा के साथ उत्साह से स्कूल जाते हुए बच्चों को देखा करती थी। उषा मिर्जापुर जिले के नारायणपुर ब्लॉक के बघेड़ा गांव में रहती है। 10 साल की उषा कभी स्कूल नहीं गई थी। वह एक ऐसे गरीब परिवार की थी जहां बच्चे भी पारिवारिक आय प्राप्त करने में मदद करते हैं। वह आशा करती थी कि कभी कोई चमत्कार होगा और वह भी दूसरे बच्चों की तरह स्कूल जा पायेगी।

उषा अनुसूचित जाति के समुदाय की थी और उसके पिता, सीचू, एक ईंट भट्टे में मजदूरी करते हैं। उनकी मजदूरी में परिवार के पांच सदस्यों का गुजर–बसर मुश्किल से ही हो पाता था। उनके पास बच्चों से काम कराने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था। प्राइमरी की शिक्षा पूरी होने के बाद ही उन्होंने अपने बड़े बेटे और बेटी का स्कूल छुड़वा दिया था।

उषा को बाल मजदूरी से बचाया गया और अब वह स्कूल जाती है

दो साल पहले टी.बी. के कारण, सीचू की मौत हो गई। इसके बाद परिवार का गुजारा चलाने के लिए उषा की मां, निशा ने, ईंट भट्टे में काम करना शुरू कर दिया, पर यह काम आसान नहीं था। उसे हर 1,000 ईंटों पर 400 रुपये का भुगतान किया जाता था। परिवार का गुजारा मुश्किल से चल रहा था। फिर वह उषा को भी अपने साथ काम पर ले जाने लगी जो मिट्टी के ढेले तोड़ने और रेत ले जाने में उसकी मदद करती थी। उसके दिमाग में एक बार भी यह बात नहीं आई कि इससे उषा की पढ़ाई पर असर पड़ेगा।

फिर बघेड़ा की महिला बाल अधिकार चैम्पियन को उषा की इस स्थिति का पता चला। गुलाबी सिंह के अनुसार, "हमने गांव में एक सर्वेक्षण कराया था जिससे हमें पता चला कि उषा स्कूल न जाने वाले

उषा और उसकी मां निशा ईंट के भट्टे में मजदूरी करते थे और उन्हें 1,000 ईंटें बनाने के बदले मात्र 400 रुपये मिलते थे। इस आय से उनका गुजारा बहुत मुश्किल से चलता था।

महिला चैम्पियन स्कूल में बच्चों के नामांकन को बढ़ावा दे रही हैं

"हमने उषा की मां को उसकी बेटी के भविष्य के लिए शिक्षा के महत्व के बारे में समझाया। हमने यह स्पष्ट किया कि सरकार न केवल मुफ्त शिक्षा प्रदान करती है, बल्कि यूनिफॉर्म, पुस्तकें और मध्यान्ह का भोजन भी देती है।"

गुलाबी सिंह,
महिला चैम्पियन,
बघेड़ा गांव

बच्चों में से एक है। हम निशा से मिले और उससे कहा कि अपनी बेटी को स्कूल में दाखिला दिलाये, पर उसने कहा कि पैसे की कमी की वजह से वह मजबूर है। महिला कार्यकर्ताओं ने हार नहीं मानी। वे उषा की मां निशा से बार–बार संपर्क करती रहीं और उसे शिक्षा के महत्व के बारे में जानकारी देती रहीं ताकि उसकी बेटी का भविष्य बन जाये। उन्होंने समझाया कि सरकार न केवल मुफ्त शिक्षा प्रदान करती है, बल्कि यूनिफार्म, किताबों और दोपहर के भोजन की व्यवस्था भी करती है।

धीरे–धीरे करके निशा की सोच बदली और उसने अपने बड़े बच्चों से, जिन्हें मजबूरी में स्कूल छोड़ना पड़ा था, इस बारे में पूछा। उन्होंने कहा कि महिला कार्यकर्ता सही कह रही हैं और वे नहीं चाहते कि उनकी छोटी बहन की भी वही स्थिति हो जो उनकी हुई है।

बघेड़ा की महिला चैम्पियन की कोशिशें तब सफल हुईं जब उषा को पड़ौस के गांव कमलपुर के प्राइमरी स्कूल में कक्षा 4 में दाखिला दिलाया गया।

उषा का स्कूल उसके घर से एक किलोमीटर दूर है, पर वह एक भी दिन स्कूल जाना नहीं छोड़ती। उषा ने व्यक्त किया कि, "मैं पढ़ना–लिखना चाहती हूं और बारहवीं तक की पूरी पढ़ाई करना चाहती हूं।" उषा की अब एक नई दुनिया की शुरूआत हुई है। निशा अब अपनी छोटी बेटी के लिए भी सोचने लगी है। उसका कहना है, "मैं तो उसे हाई स्कूल के बाद भी पढ़ाऊंगी और फिर उसे अपने पैरों पर खड़ा होने में मदद करूंगी।"

अपनी मां के ये शब्द सुनकर उषा के चेहरे पर जो हल्की मुस्कान आई, वह देखते ही बनती थी!

नहीं रूकेंगे, शिक्षा का हक लेकर रहेंगे

बाल संरक्षण समिति ने बाल मजदूरी के खिलाफ जो संघर्ष किया उसने निर्धन और भूमिहीन मजदूरों के परिवारों को बच्चों से काम न कराने के लिए प्रेरित किया

रामधेवपुर गांव की महिला समूह की एक सदस्य सितारा का कहना है कि, "मेरे बच्चे स्कूल जाते हैं, निर्माण स्थल पर काम करने नहीं जाते। स्कूल जाना उनका अधिकार है जिसे माता–पिता भी उनसे नहीं छीन सकते।"

कुछ समय पहले गांव में स्थिति गंभीर हुआ करती थी; धोबी ब्लॉक के इस गांव में बाल मजदूरी एक आम बात थी। गांव में सोनकार की आबादी काफी अधिक है। ये अनुसूचित जाति के हैं। गांव में दूसरे समुदायों के ज्यादातर लोग खेती करते हैं, पर सोनकर भूमिहीन हैं, वे निर्माण कार्य करते हैं और दिहाड़ी पर काम करने वाले मजदूर हैं। अपर्याप्त संसाधनों और गरीबी के कारण मजबूर, यहां के वयस्क बच्चों को आर्थिक संपत्ति के रूप में देखते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि बच्चे काम में माता–पिता की मदद करते हैं और शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। इसका असर बच्चों के स्वास्थ्य पर पड़ता है। निर्माण स्थलों पर काम करने वाले बच्चों को सांस की बीमारी और पीठ दर्द की शिकायत रहती है जिसका कारण धूल में काम करना और भारी वज़न उठाना है।

रामधेवपुर गांव के बच्चे अब सुखद बचपन बिता रहे हैं

निर्धन सोनकार समुदाय के बच्चे काम में अपने माता-पिता की मदद करते थे। जो निर्माण स्थलों पर काम करते थे, उन्हें धूल के बीच सख्त मेहनत करने और भारी वज़न उठाने की वजह से सांस लेने तथा पीठ दर्द की शिकायत रहती थी।

बच्चों के भविष्य पर बाल मजदूरी के खतरे को देखते हुए गांव में सी.पी.सी. के सदस्यों और महिला समूह ने इस बुराई से लड़ने का फैसला किया।

पहले उन्होंने उन बच्चों की पहचान की जो कि स्कूल नहीं जाते थे। उन्हें यह जान कर गहरा झटका लगा कि सोनकार समुदाय के 75 बच्चों में से लगभग 50 बच्चे कभी स्कूल नहीं गये थे।

सी.पी.सी. के एक सदस्य दिनेश ने बताया, "बच्चे अक्सर उन स्थानों पर जाते थे जहां उनकी मेहनत का शोषण होता था। यहां तक कि अपनी मजदूरी का एक हिस्सा वे नशीली दवाओं पर खर्च कर डालते थे।"

सी.पी.सी. और महिला समूह के सदस्यों ने धीरे–धीरे करके बदलाव लाने की योजना बनाई। आखिर ये बच्चे परिवार की आय में योगदान कर रहे थे और माता–पिता को अचानक किसी नई बात के लिए राजी करना मुश्किल था।

उन्होंने छोटे–छोटे कदम उठाने का फैसला किया। सी.पी.सी. के सदस्यों ने समय–समय पर गांव वालों के साथ बैठकें और विचार–विमर्श आयोजित करके शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण के बारे में जागरूकता पैदा करने का काम शुरू किया। शुरू की बैठकों और विचार–विमर्शों में बाल मजदूरी को बच्चों के अधिकारों के उल्लंघन और कानूनी अपराध के रूप में प्रस्तुत किया गया। न केवल बच्चों पर मजदूरी के नुकसानदेह प्रभाव पर चर्चा की गई, बल्कि इस पर रोक लगाने वाले कानूनों को भी स्पष्ट किया गया।

अगली बैठकों में सदस्यों ने रामधेवपुर में मौजूद स्थिति पर ध्यान केन्द्रित किया। बाल मजदूरों की स्थिति पर चर्चा की गई और बाल मजदूरी के नकारात्मक प्रभाव पर जोर दिया गया। माता–पिता को बच्चों के जीवन में और उनके भविष्य के लिए शिक्षा के मूल्य तथा

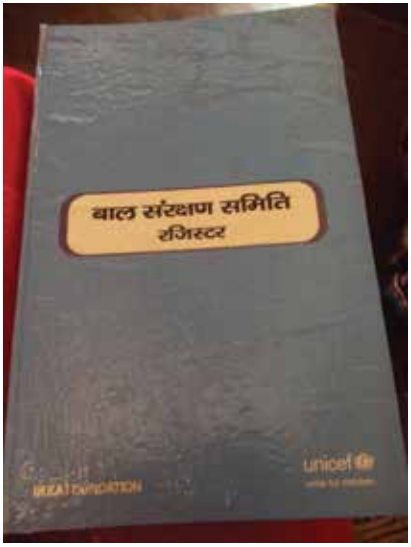

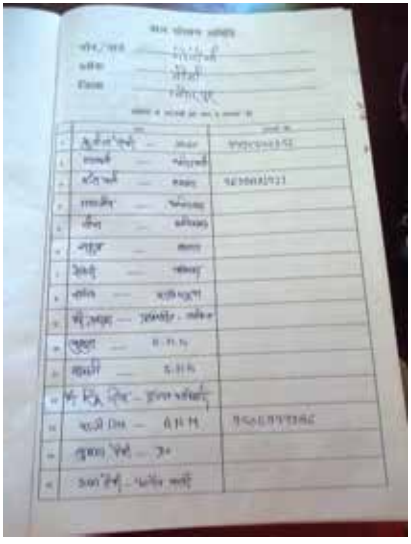

रामधेवपुर गांव की सी.पी.सी. अपनी गतिविधियों का रिकॉर्ड ध्यान से रखते हैं

सी.पी.सी. और महिला समूह के प्रयासों के परिणाम तब सामने आये जब काम करने वाले बच्चों के माता-पिता उन्हें काम से हटाने पर सहमत हुए। इसके बाद सोनकार समुदाय के 50 बच्चों को पास के प्राथमिक स्कूल में दाखिला दिलाया गया।

महत्व के बारे में जानकारी दी गई। उनसे आग्रह किया गया कि वे अपने बच्चों को अवश्य स्कूल भेजें।

इन विचार–विमर्शों और चर्चाओं के अलावा, महिला समूह के सदस्यों ने घर–घर गए तथा बाल मजदूरी पर रोक लगाने के संदेशों को प्रसारित किया।

समुदाय के साथ ये सावधानीपूर्वक आयोजित किये गये कार्यकलाप सी.पी.सी. और महिला समूह के संपर्क का केन्द्र बन गये। इन से बाल संरक्षण संगठनों में समुदाय का विश्वास जगाने में भी मदद मिली। इन सभी कोशिशों का फल तब देखने को मिला जब वे सभी – जिनके बच्चे मजदूरी करते थे– अपने बच्चों को काम से वापस लेने के लिए राजी हो गये। समुदाय की इस उत्साहपूर्ण प्रतिक्रिया के बाद सोनकार समुदाय के लगभग 50 बच्चों को पास के प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों में दाखिल दिया गया।

रामधेवपुर में सी.पी.सी. और महिला समूह की कोशिशों का नतीजा यह हुआ कि अब धोबी ब्लॉक के बहुत से गांवों में बाल अधिकारों के मुद्दों पर जागरूकता पैदा करने का काम शुरू हो गया है। बाल मजदूरी का उन्मूलन करने के लिए आस–पास के गांवों के सोनकार और अन्य अनुसूचित जाति के समुदायों के साथ काम किया गया।

आने वाले दिनों में सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर समुदायों के कई बच्चों को बाल मजदूरी से मुक्त कराया गया। ग्राम पंचायत के गांवों में बीच में पढ़ाई छोड़ने वाले और स्कूल न जाने वाले बच्चों की संख्या में कमी आई है। इससे बच्चों के पूर्ण विकास के लिए एक अनुकूल वातावरण तैयार हो गया है।

निष्पक्ष व्यवहार की मांग

ग्राम प्रधान और बाल संरक्षण समिति ने जो ठोस कार्रवाई की उससे उन्हें कमजोर वर्ग के बच्चों और महिलाओं को अधिकार दिलाने तथा ग्राम स्वास्थ्य कार्यकर्ता से जवाबदेही की मांग करने में मदद मिली

लहरचाक गांव की *ग्राम प्रधान,* चंद्रिका देवी अपने गांव में आंगनवाड़ी केन्द्र को फिर स्थापित करने के अपने अनथक प्रयासों के लिए जानी जाती है। वह बच्चों के अधिकारों की उत्साही पैरवीकार हैं और उनका यह दृढ़ विश्वास है कि बच्चों के भविष्य की मजबूत आधारशिला रखने के लिए ग्राम स्तर पर स्वास्थ्य सेवाओं को मजबूत बनाना जरूरी है।

लहरचाक गांव धोबी ब्लॉक के अंतर्गत आता है। यहां कृषि योग्य भूमि के विशाल भूखंड है और यह गांव सड़कों से जुड़ा हुआ है। यहां अधिकतर मकान पक्के हैं और आंगनवाड़ी केन्द्र ऐसी जगह पर स्थित है जहां सभी लोग आसानी से पहुंच सकते हैं। दो साल पहले गांव में 3–6 वर्ष का कोई भी बच्चा आंगनवाड़ी केन्द्र नहीं जाता था।

गांव की एक महिला, आशा ने याद करते हुए बताया कि, "आंगनवाड़ी केन्द्र कई दिनों तक खुलता ही नहीं था और आंगनवाड़ी कार्यकर्ता कभी–कभी ही यहां आती थी। आंगनवाड़ी केन्द्र में अनियमितताओं और काम ठीक ढंग से न होने से न केवल बच्चों और किशोरियों पर प्रभाव पड़ा, बल्कि गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताएं भी प्रभावित हुईं। "उन्हें जरूरी पूरक पोषण और परामर्श सेवाएं प्राप्त नहीं हो पा रही थीं। ग्राम स्वास्थ्य और पोषण दिवस का आयोजन कभी–कभी ही किया जाता था," यह कहना था गांव की एक महिला प्रीति का था। लहरचाक गांव में सामान्य जातियों और अनुसूचित जातियों के लोग रहते हैं। इन सभी समुदायों के बच्चे आंगनवाड़ी केन्द्र में जाते थे। प्रीति ने बताया कि, "यह बात किसी से छिपी नहीं है कि जाति के आधार पर आंगनवाड़ी कार्यकर्ता बच्चों के साथ भेदभाव करती थी। उसे अनुसूचित समुदाय के बच्चों और महिलाओं में कोई दिलचस्पी नहीं थी।"

लहरचाक के लोग इससे बहुत नाखुश थे। फिर 2012 में, चंद्रकला गांव की प्रधान चुनी गई। उन्होंने पहला काम यह किया कि वह आंगनवाड़ी केन्द्र के आकस्मिक दौरे (सरप्राइज्ड विजिट्स) करने लगी। पर इससे कोई प्रभाव नहीं पड़ा जैसा कि वह आशा कर रही थी। संयोग से चंद्रकला भी अनुसूचित जाति समुदाय की हैं।

"आंगनवाड़ी केन्द्र की अनियमितताओं और गलत रूप से कार्य करने की वजह से बच्चों, किशोरियों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं पर प्रभाव पड़ता था। उन्हें आवश्यक पूरक पोषण और परामर्श सेवाएं प्राप्त नहीं हो पा रही थीं। वी.एच.एन.डी. का आयोजन कभी-कभार ही किया जाता था।"

प्रीति, लहरचाक की निवासी

चंद्रकला ने याद करते हुए कहा कि, "जब मैं हर दिन आंगनवाड़ी केन्द्र खोलने को कहती तो आंगनवाड़ी कार्यकर्ता मेरी बात पर जरा भी ध्यान नहीं देती थी। मुझे बहुत निराशा हुई, पर मैंने हिम्मत नहीं हारी। मैं यही सोचती रहती कि किस तरह उसके इस उदासीन रवैये को बदलूं। फिर अचानक मुझे सूझा कि मुझे सी.पी.सी. की मदद लेनी चाहिए।"

चंद्रकला सी.पी.सी. की एक सक्रिय सदस्य हैं और उन्होंने समिति की बैठकों के दौरान इस मुद्दे को उठाया। सी.पी.सी. ने इस मुद्दे को हाथ में लेने का फैसला लिया और परिणाम हासिल करने के लिए एक विस्तृत योजना बनाई।

सी.पी.सी. सदस्य श्याम ने याद किया, "हमने फैसला किया कि पहले मामले को शांतिपूर्वक उठायेंगे। ग्राम प्रधान ने आंगनवाड़ी कार्यकर्ता से मुलाकात की और उसके खिलाफ मिली बहुत सी शिकायतों के बारे में बताया। पर आंगनवाड़ी कार्यकर्ता ने इन सभी शिकायतों को गलत ठहराया और सी.पी.सी. की बैठकों में भाग लेने से मना कर दिया।

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता ने कुछ भी करने से मना कर दिया और आंगनवाड़ी केन्द्र उसी बुरी हालत में पड़ा रहा। चंद्रकला और सी.पी.सी. के सदस्यों ने यह फैसला किया कि अब इस स्वास्थ्य कार्यकर्ता के खिलाफ कठोर कार्रवाई करने का वक्त आ गया है। चन्द्रकला ने कहा कि– "हमने सी.डी.पी.ओ. को लिखित में शिकायत दी और आंगनवाड़ी केन्द्र के काम की बुरी स्थिति और अनियमित आंगनवाड़ी कार्यकर्ता के बारे में बताया। शिकायत जमा करने के बाद आई.सी.डी.एस. के अधिकारियों ने तत्काल कार्रवाई की। सी.डी.पी.ओ.

सक्रिय महिला प्रधान ने गांव के आंगनवाड़ी केन्द्र को पुनः जीवित किया

सी.पी.सी. ने सी.डी.पी.ओ. के पास लिखित शिकायत दर्ज करवाई और सी.डी.पी.ओ. ने तत्काल कार्रवाई की।

आंगनवाड़ी केन्द्र गये और आंगनवाड़ी कार्यकर्ता को ईमानदारी के साथ अपनी भूमिका और उत्तरदायित्व निभाने के लिए कठोर निर्देश दिये। इसके फलस्वरूप आंगनवाड़ी कार्यकर्ता अपने काम करने के तरीकों में सुधार लाई। इसकी एक वजह यह थी कि उसे डर था कि उसके खिलाफ कार्रवाई की जायेगी।"

चंद्रकला ने मुस्कुराते हुए बताया, "फिर क्या था? आंगनवाड़ी केन्द्र सही ढंग से कार्य करने लगा और आंगनवाड़ी कार्यकर्ता लोगों के प्रति जवाबदेह बन गई।" चंद्रकला इस बात से खुश है कि लहरचाक की महिलाओं और बच्चों को उनके अधिकार प्राप्त हो गये हैं।

इस समय 3–6 वर्ष के सभी बच्चे आंगनवाड़ी केन्द्र जाते हैं और उन्हें पूरक पोषण भी मिलता है। गांव के लोग चंद्रकला के नेतृत्व से खुश हैं और वह भी अपनी उपलब्धियों के लिए सी.पी.सी. की सहायता को स्वीकारती है।

बच्चों को मिला अनुकूल माहौल

सी.पी.सी. ने शारीरिक सजा के खिलाफ जागरूकता पैदा की और गांव के लोगों के साथ मिलकर इकौना गांव में बच्चों के लिए अनुकूल वातावरण तैयार किया

जब 8–वर्षीय अमित स्कूल जाने से मना करता था तो उसके माता–पिता सिध्यावती और वंशराज चकित हो जाते थे। उन्हें अच्छी तरीके से याद है वह लंबा और निराशदायक सप्ताह जब उनका अन्यथा खुश और आज्ञाकारी बच्चा जिद्द करके घर पर रह गया। "स्कूल" बस यह शब्द सुनते ही वह परेशान हो जाता था।

वंशराज के अनुसार, "हमने सोचा कि अमित को स्कूल में या स्कूल से घर लौटते समय बुरे अनुभव का सामना करना पड़ा है। जब सिध्यावती ने उसे प्यार से पुचकार कर पूछा कि क्या हुआ है तो वह रोने लगा और बोला कि मां मास्टर जी ने मुझे बहुत मारा है मैं दुबारा स्कूल नहीं जाना चाहता।"

अमित के माता–पिता बहुत परेशान थे। वे गांव की सी.पी.सी. के पास पहुंचे और अपने बच्चे के अनुभव और भावुक अवस्था पर चर्चा की। सी.पी.सी. से उन्हें पता चला कि शारीरिक दंड एक अपराध है और यह कानून द्वारा प्रतिबंधित है।

सी.पी.सी. के सदस्य सुभागी ने बताया, "हमने माता–पिता को बताया कि यह बच्चों के अधिकारों का गंभीर उल्लंघन है। किसी भी ऐसी सजा का कारण माफ नहीं किया जा सकता जिसमें शारीरिक ताकत का उपयोग किया जाये।"

जल्दी ही गांव के कई लोगों को अमित की हालत का पता चल गया। लोग तो सदमे में आ गये। इस शारीरिक सजा से अमित पर इतना असर पड़ा कि वह

> शारीरिक दण्ड का छोटे अमित पर इतना बुरा असर पड़ा कि वह स्कूल जाने का साहस तक न जुटा पाया। आखिरकार उसे पास के ही दूसरे प्राथमिक स्कूल में दाखिला दिलाना पड़ा।

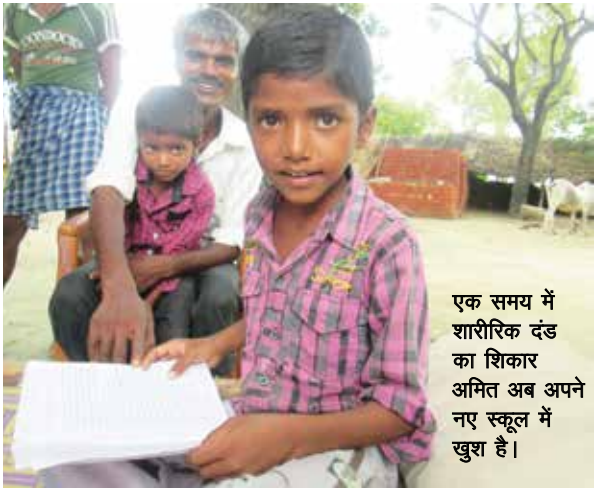

एक समय में शारीरिक दंड का शिकार अमित अब अपने नए स्कूल में खुश है।

जिस घटना के कारण अमित के जीवन में गहरे जख्म आए, उसके बाद अमित के माता–पिता अब अपने बच्चों के प्रति अधिक रक्षात्मक बन गए हैं

बेचारा स्कूल जाने की हिम्मत भी नहीं जुटा पा रहा था। अंत में एक पास के एक दूसरे स्कूल में अमित को दाखिला करा दिया गया।

इस घटना की वजह से गांव में शारीरिक दंड के खिलाफ प्रतिबंध की मांग करते हुए एक अभियान शुरू हो गया। इसके बाद कई बच्चों ने बताया कि उनके शिक्षक उन्हें थप्पड़ मारते हैं, पीटते हैं और बेंत से भी मारते थे।

इस मुद्दे पर एक साझी समझ बनाने के लिए सी.पी.सी. ने गांव के लोगों को संवेदित करने के लिए कार्य करना शुरू किया। गांव के लोगों को यह बताया गया कि शारीरिक सजा बच्चे के अधिकारों का उल्लंघन है और इसका बच्चे पर मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक प्रभाव पड़ता है। इससे बच्चों की शिक्षा और जीवन के दूसरे पहलू भी प्रभावित होते हैं। अमित का उदाहरण देकर इस चर्चा पर प्रकाश डाला गया।

इकौना गांव में लगभग 100 परिवार रहते हैं जिनमें से कुछ सामान्य वर्ग के हैं, कुछ अन्य पिछड़ी जातियों के हैं और कुछ अनुसूचित जातियों के हैं। पर विचार–विमर्शों में सभी ने भाग लिया। जल्दी ही

सीपीसी और गांव के लोगों ने मिलकर यह सुनिश्चित किया कि स्कूल के अधिकारी और प्रशिक्षक किसी भी रूप में शारीरिक सजा को बंद करें जिससे स्कूल बच्चों के प्रति मैत्रीपूर्ण बने।

सभी जातियों के लोगों के बीच यह समझ बन गई कि शारीरिक दंड गलत है और इससे बच्चों पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है।

इसके बाद सी.पी.सी. ने इकौना के प्राथमिक स्कूल के प्रधानाध्यापक से बात की और शिक्षकों के व्यवहार की जानकारी दी। बैठकों में शिक्षक भी मौजूद थे और उन्होंने स्वीकार किया कि जब बच्चे कक्षा में

महिला समूह और सी.पी.सी. के सदस्यों ने मिलकर गांव के स्कूलों में शारीरिक दंड की प्रथा को किया समाप्त

कोई गलत काम करते हैं तो वे उन्हें थप्पड़ मार देते हैं या बेंत से पीट देते हैं। सी.पी.सी. के सदस्यों ने मुख्याध्यापक और शिक्षकों को इसके बुरे प्रभावों के बारे में बताया और शारीरिक दंड पर पाबंदी लगाने के कानून की जानकारी देते हुए चेतावनी दी। समुदाय के सदस्यों ने सी.पी.सी. का समर्थन किया कि बच्चों को कभी भी दंड नहीं दिया जाना चाहिए। प्रधानाध्यापक ने गांव वालों और सी.पी.सी. के सदस्यों को आश्वासन दिया कि स्कूल में बच्चों को शारीरिक दण्ड नहीं दिया जायेगा।

आगे आने वाले दिनों और सप्ताहों में इकौना प्राथमिक स्कूल में पढ़ने वाले बच्चों के माता–पिता अपने बच्चों के व्यवहार पर नजर रखने लगे हैं। वे पूछते हैं कि क्या उन्हें सजा तो नहीं दी गई। शारीरिक दंड की और शिकायतें न सुनने पर गांव वाले संतुष्ट हो गये। माता–पिता द्वारा की गई इस पहलकदमी से बच्चों को हिंसा और दुर्व्यवहार से बचाने में मदद मिली। इतना ही नहीं, स्कूलों में बच्चों के प्रति एक मैत्रीपूर्ण वातावरण तैयार करने में मदद मिली। माता–पिता स्कूल के प्रबंधन में अधिक भागीदारी करने लगे।

सी.पी.सी. ने इकौना में शारीरिक दंड को समाप्त करने का जो संदेश फैलाया था, वह पड़ोस के गांवों में भी पहुंच गया। इस तरह इस मुद्दे के बारे में जागरूकता बढ़ती ही चली गई और आज स्थिति यह है कि और भी माता–पिता तथा स्कूलों के अधिकारी स्कूलों में शारीरिक दंड के मामलों को कम करने के लिए कार्य कर रहे हैं।

भेदभाव हुआ दूर

बाल संरक्षण समिति के सदस्यों ने हाजीपुर के स्कूल में जातिगत भेदभाव का सामना करने वाले बच्चों को आवश्यक शक्ति और सहायता प्रदान की

12–वर्षीय प्रियंका को स्कूल जाना अच्छा लगता है। उसे विशेष रूप से गणित का विषय पसंद है। प्रियंका मिर्जापुर जिले के जमालपुर ब्लॉक के हाजीपुर गांव में रहती है और अनुसूचित जाति के समुदाय की है। गांव में अनेक जातियों के लोग रहते हैं। अनुसूचित जाति के अन्य बच्चों की तरह प्रियंका को भी यह मालूम नहीं था कि जातिगत विभाजन किस तरह की बर्बादी ला सकता है।

अतः इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि जब कन्या पूर्व माध्यमिक विद्यालय में उनके खिलाफ भेदभाव किया गया तो वे इसका सामना करने के लिए जरा भी तैयार नहीं थे। जब एक बार शौचालयों की सफाई करने वाले सफाई कर्मचारी काम पर नहीं आये तो शिक्षक ने पूजा सहित कुछ छात्र–छात्राओं को यह काम करने के लिए चुना।

बच्चे स्कूल अधिकारियों के डर से इसका जरा भी विरोध नहीं कर पाये। विशेष रूप से तकलीफदेह बात यह थी कि केवल अनुसूचित जाति के बच्चों को ही यह कार्य करने को कहा गया था। जब कुछ ने काम करने से मना किया तो शिक्षक ने उन्हें डांटा–फटकारा और बांस की बेंत से उनकी पिटाई की। शिक्षक की इस बेशर्मीपूर्ण हरकत पर जब अधिकारी चुप्पी साधे रहे तो स्थिति और भी जटिल हो गई।

इस स्कूल में जातिगत भेदभाव कई रूपों में मौजूद था। अनुसूचित जाति के बच्चों को कक्षा में सबसे पिछली पंक्ति में बैठने को कहा जाता था जबकि उच्च जाति के बच्चे सामने वाली पंक्तियों में बैठते थे। इससे भी अधिक परेशानी की बात यह थी कि यह सब स्कूल की प्रधानाध्यापिका, मालती देवी के आदेश पर किया जा रहा था, जो खुद उच्च जाति की थी।

इसका परिणाम विपदाजनक रहा। कक्षा–8 में पढ़ने वाली सुमन जैसे कुछ छात्र–छात्राएं ऐसे थे जिनके माता–पिता उन्हें प्राइवेट स्कूल में भेजने के लिए तैयार थे और उन्होंने सुमन को तत्काल स्कूल से निकाल लिया। कमजोर वर्ग के कुछ दूसरे बच्चों ने पढ़ाई छोड़ दी क्योंकि वे यह अपमान बर्दाश न कर सके।

पर स्कूल में अनुसूचित जाति के बच्चों से शौचालय साफ कराने की प्रथा जारी रही। तब एक बैठक के दौरान यह मामला सी.पी.सी. के सामने लाया गया। शिक्षकों की संवेदनहीनता और बाल अधिकारों के उल्लंघन से विचलित होकर सी.पी.सी. के सदस्य स्कूल जा पहुंचे और शिक्षकों से आमने–सामने बात की। पकड़े जाने की स्थिति में शिक्षकों ने स्वीकार किया कि उन्होंने कुछ बच्चों

सी.पी.सी. ने एक निगरानी दल का गठन किया जिसमें सी.पी.सी., महिला समूह और बाल पंचायत से दो-दो सदस्य थे। एहतियात के तौर पर यह फैसला लिया गया कि इन टीमों में सभी जाति समूहों के प्रतिनिधि होंगे। इसके साथ ही स्कूल में नये प्रधानाध्यापक और सफाई कर्मचारियों की नियुक्ति भी की गई।

"मुझे शौचालय साफ करना बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था। उनसे बदबू आती थी। मैं हर समय गंदगी महसूस करती थी। क्लास की दूसरी लड़कियां मेरे साथ खेलती नहीं थीं"

सुमन, कक्षा 8 की छात्रा

से शौचालयों की सफाई कराई थी, पर इस बात से साफ इंकार कर लिया कि इसके लिए अनुसूचित जाति के परिवारों के बच्चों को ही चुना गया था।

सी.पी.सी. के सदस्यों ने फैसला किया कि बच्चों के खिलाफ भेदभाव की इस प्रथा को समाप्त करना जरूरी है। उन्होंने निगरानी रखने के लिए एक टीम का गठन किया जिसमें सी.पी.सी., महिला समूह और बाल पंचायत से दो–दो सदस्य थे। एहतियात के तौर पर यह फैसला लिया गया कि इस टीम में सभी जाति समूहों के सदस्य प्रतिनिधित्व करेंगे। सी.पी.सी. के सदस्यों ने स्कूल में सफाई कर्मचारियों की नियुक्ति भी सुनिश्चित कराई। शीघ्र ही एक नये मुख्याध्यापक की नियुक्ति की गई जो न केवल जाति–आधारित भेदभाव के खिलाफ हैं, बल्कि स्कूल में बच्चों के प्रति मैत्रीपूर्ण वातावरण तैयार करना चाहते हैं।

प्रियंका और उसके मित्रों के लिए– जिन्हें अपने शिक्षकों द्वारा किये गये अपमान को झेलना पड़ा, यह एक कड़वा अनुभव था। पर इसी के साथ ये बच्चे अन्याय के विरूद्ध एकजुट संघर्ष, उससे हासिल समर्थन और उसकी जीत से हमेशा प्रेरित रहेंगे।

सुरक्षित वातावरण के लिये सामूहिक प्रयास

यह प्रेरक कहानी बताती है कि किस तरह एक समुदाय ने स्कूल में एक शिक्षक द्वारा बच्चों के विरुद्ध हिंसापूर्ण और अपमानजनक व्यवहार का सामना किया

मिर्जापुर जिले के लालगंज ब्लॉक के चितंग गांव का प्राइमरी स्कूल टूटी–फूटी हालत में था। बाउंडरी की दीवारें टूट चुकी थीं, कक्षाएं खस्ता हालत में थीं, शौचालय काम नहीं करते थे और गेट किसी भी समय टूट कर गिरने वाली हालत में था। छात्रों की तकलीफें यहीं तक सीमित नहीं थीं। शिक्षक भी उनकी जरूरतों के प्रति उदासीन थे। इसके साथ ही वे गाली–गलौज और हिंसा भी करते थे। इस कारण चितंग के बच्चों के लिए स्कूल का माहौल जरा भी अच्छा नहीं था। इसलिए आश्चर्य नहीं कि बच्चे बीच में पढ़ाई छोड़ देते थे। गांव वालों ने तो इस हालत से जैसे समझौता कर लिया था और उनमें बदलाव लाने की इच्छाशक्ति नहीं रह गई थी।

हिंसा से पीड़ित बच्चों के माता–पिता ने दोषियों के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज कराई

एक दिन 10–वर्षीय ममता कक्षा में बैठी चुपचाप किताब पढ़ रही थी और उसके सहपाठी कमरे में खेल–कूद रहे थे। तभी एक शिक्षक, संतोष कुमार, तिवारी कक्षा में आये। यह हो–हल्ला देखकर वे गुस्से से भर गये और यह गुस्सा उन्होंने उस बच्चे पर उतार दिया जो सबसे पहले उनकी नजर में आया। यह बच्चा और कोई नहीं ममता थी जो चुपचाप पढ़ रही थी। उन्होंने उसे पीटना शुरू कर दिया। ममता को चोटें लगी थीं और वह अंदर से हिल गई थी। फिर वह सिसकते हुए अपने घर पहुंची और पूरी कहानी घर वालों को बताई।

ममता के माता–पिता, मुकतुन और भाईलाल विश्वकर्मा, यह सब सुनकर भयभीत हो गये तथा उन्हें गहरा दर्द पहुंचा। ममता के पिता एक बढ़ई हैं। वे सी.पी.सी. के

> प्राथमिक स्कूल खस्ता हालत में था, शिक्षक बच्चों पर ध्यान नहीं देते थे और उनकी जरूरतों के प्रति उदासीन थे। वे गाली-गलौज और हिंसक व्यवहार करते थे। चितंग के बच्चों के लिए स्कूल कोई खुशीभरा अनुभव नहीं था; बच्चों का बीच में पढ़ाई छोड़ देना आम बात थी।

सदस्य लक्ष्मण और ग्राम प्रधान से मिले। सभी स्कूल पहुंचे और उस शिक्षक के पास गये। पर तिवारी तो बात करने को तैयार ही नहीं था। उल्टे वह लड़ाई और गाली–गलौज पर उतर आया।

तिवारी अपने गुस्से वाले मिजाज, गाली–गलौज वाली भाषा और बच्चों को बेरहमी से पीटने के लिए कुख्यात था। वह स्कूल भी नियमित रूप से नहीं आता था। अक्सर वह नशे की हालत में देखा जा सकता था। उसके इस अपमानजनक व्यवहार से दुखी कई माता–पिता ने उसके खिलाफ ब्लॉक शिक्षा अधिकारी से लिखित शिकायतें दर्ज करवा रखी थीं। पर उसके खिलाफ कर्रवाई करने के लिए अब तक कोई कदम नहीं उठाया गया था। मामले को अंतिम रूप से निबटाने के लिए ग्राम प्रधान ने तिवारी के व्यवहार की शिकायत सी.पी.सी. और महिला समूह से की। सभी की सहमति से तिवारी के खिलाफ कठोर कार्रवाई करवाने का फैसला लिया गया। फिर से ब्लॉक शिक्षा अधिकारी के पास उचित कार्रवाई करने के लिए शिकायत दर्ज की गई। दबाव डालने के लिए

सी.पी.सी. ने गाली-गलौज करने वाले शिक्षक संतोष कुमार के खिलाफ ब्लॉक शिक्षा अधिकारी के पास लिखित शिकायत दर्ज कराई और दबाव डाला। जब एस.डी.एम. ने प्राथमिक स्कूल का अचानक दौरा किया तो तिवारी की सच्चाई सामने आ गई तथा उसे तत्काल निलंबित कर दिया गया।

चितंग गांव के सी.पी.सी. सदस्य हिंसा के किसी भी घटना से निपटने के लिए बेहद जागरुक एवं सक्रिय हैं

सी.पी.सी. और महिला समूह के सदस्य नियमित रूप से बी.ई.ओ. के कार्यालय में जाते थे।

अंत में एस.डी.एम. ने मामले पर ध्यान दिया और स्कूल का आकस्मिक दौरा किया। तिवारी को नशे की हालत में पाया गया और उसके पास से शराब की एक बोतल बरामद हुई। इसने मामले को अंत तक पहुंचा दिया। एस.डी.एम. ने तत्काल तिवारी को काम से हटाने का आदेश दिया और दूसरे अध्यापक की नियुक्ति के लिए कहा।

स्कूल के इस अध्यापक के जाने के बाद बच्चों और माता–पिता को राहत मिली। आज यह स्कूल शांतिपूर्ण है; इसका वातावरण भी बच्चों के अनुकूल है। नए अध्यापक भी काफी जानकार और मददगार माने जाते हैं। बच्चे अब उत्साह से अपनी पढ़ाई करते हैं। हो सकता है पुरानी घटनाओं से बच्चों के घाव अभी भरे न हों पर युवाओं का उत्साह और इतने सारे समर्थकों के होने से बदलाव की जो संभावना दिखाई देती है वह इस प्राइमरी स्कूल के बच्चों के उज्ज्वल भविष्य की ओर इशारा करती है।

बचपन बचा बाल विवाह के अभिशाप से

बाल संरक्षण समिति के प्रयासों की वजह से छोटी उम्र की लड़की को बाल-वधू होने से बचाया गया

श्री चंद्रगुप्त मौर्य इंटरमीडिएट कॉलेज मधुपुर गांव के एक व्यस्त बाजार के नजदीक स्थित है। यह गांव सोनभद्र जिले के मुख्यालय रॉबर्ट्सगंज के पास है।

कक्षा 10 की छात्रा कुसुम जो यहां से 5 किलोमीटर की दूरी पर एक बस्ती में रहती है, विज्ञान पर एक लेक्चर सुन रही है। दो वर्ष पहले वह एक बालिका वधू बनने ही वाली थी।

कुसुम के पिता सुरेश प्रसाद सिंह जो कि एक किसान हैं, ने बताया कि, "2013 की गर्मियों में जब कुसुम मात्र 14 साल की थी, तब हमें शादी का एक प्रस्ताव प्राप्त हुआ था। हमने उसकी शादी करने का फैसला कर लिया था क्योंकि हमारे समुदाय में लड़कियों की शादी इसी उम्र में करने का रिवाज है।"

कुसुम मौर्य समुदाय की है। यह समुदाय अन्य पिछड़े वर्ग के अंतर्गत आता है और पारंपरिक रूप से खेती करता रहा है। कुसुम के पिता की पांच बीघा जमीन है, जिस पर वे खेती करते हैं और यही परिवार की आय का एकमात्र स्रोत है।

कुसुम एक होनहार छात्रा है और उसकी पढ़ाई में शुरू से ही दिलचस्पी है। उस मृदुभाषी लड़की ने बताया, "जब शादी का प्रस्ताव आया तो मैंने केवल सातवीं कक्षा की पढ़ाई पूरी की थी। मैं अपनी शिक्षा पूरी करना चाहती थी। मुझे अपने पिता की स्थिति और उनकी कमजोर वित्तीय हालत को देखकर दुख होता था। मैंने महसूस किया कि मेरी शादी कर देने से शायद उनका बोझ कुछ कम हो जायेगा।"

कुसुम की मां उसके पिता की दूसरी पत्नी है। पहली पत्नी से उनकी दो लड़कियां हुई थीं और सुरेश प्रसाद सिंह ने इस आशा में फिर से शादी की कि दूसरी पत्नी से उसे लड़का प्राप्त होगा। उसकी दूसरी पत्नी ने एक लड़के को तो जन्म दिया, पर तीन लड़कियों को जन्म देने के बाद।

कुसुम के पिता इस क्षेत्र के किसान समुदायों के बीच गहरे जमे इस विचार को दोहराते हैं, "कृषि से प्राप्त होने वाली आय स्थिर नहीं है। इसलिए जितना जल्दी हो लड़कियों की शादी करके अपनी जिम्मेदारी से मुक्त हो जाना चाहिए।" कुसुम की सौतेली बहनों की शादी छोटी उम्र में ही कर दी गई थी।

जब कुसुम की शादी का इंतजाम किया जा रहा था तब वह एक सरकारी माध्यमिक स्कूल में पढ़ती थी। स्कूल के एक सहायक शिक्षक संजय कुमार ने बताया, "जब मुझे पता चला कि कुसुम की शादी होने जा रही है तो मुझे दुःख हुआ क्योंकि कुसुम एक होनहार और कक्षा की सबसे मेधावी छात्राओं में से एक थी। एक शिक्षक के रूप में मैं यह सोच कर परेशान सा हो गया कि अगर उसकी शादी हो जाती है तो वह आगे नहीं पढ़ पायेगी।"

संजय कुमार मधुपुर की सी.पी.सी. के एक सक्रिय सदस्य थे। सी.पी.सी. ने यह मामला अपने हाथ में लिया और कुसुम के माता–पिता को बातचीत करने के लिए बुलाया। उसके पिता ने बताया कि शादी करने की खास वजह उनकी कमजोर आर्थिक स्थिति है। सी.पी.सी. के सदस्यों ने उन्हें समझाया कि बाल विवाह के क्या–क्या नुकसान हो सकते हैं, अभी कुसुम न तो शारीरिक रूप से और न ही भावनात्मक रूप से पत्नी तथा मां बनने के लायक है। उन्हें छोटी उम्र में गर्भधारण और मां बनने के घातक परिणामों की जानकारी भी दी गई।

संजय कुमार ने आगे बताया कि, "हमने कुसुम के माता–पिता को बच्चों के और खासकर लड़कियों के अधिकारों के बारे में जानकारी दी और यह भी बताया कि बाल–विवाह की कानून इजाजत नहीं देता।''

इसके बाद सुरेश प्रसाद सिंह और उनकी पत्नी ने शादी को रद्द करने का फैसला किया और लड़के के परिवार को अपने फैसले की जानकारी दी। आंखों में चमक लिये कुसुम ने कहा कि, "जब मुझे अपने माता–पिता के फैसले के बारे में पता चला तो मेरी खुशी का ठिकाना न रहा क्योंकि अब मैं अपनी पढ़ाई जारी रख सकती थी।"

"खेती से प्राप्त होने वाली आय स्थिर नहीं है। इसलिए जितना जल्दी हो सके लड़कियों की शादी की जिम्मेदारी निभाना बेहतर होता है।"

सुरेश प्रसाद सिंह, कुसुम के पिता

कुसुम के जीवन में आया बदलाव मधोपुर की अनेक लड़कियों के लिये आकांक्षा और आशा लाई है

सी.पी.सी. ने कुसुम के माता-पिता को परामर्श दिया कि वह न तो भावनात्मक रूप से और न ही शारीरिक रूप से पत्नी तथा मां बनने के लिए तैयार हुई है। उन्होंने यह भी बताया कि बाल विवाह एक कानूनी अपराध है।

कुसुम के इस मामले का ऐसा प्रभाव पड़ा जिसकी आशा भी नहीं की जा सकती है। हुआ यह कि केवल 15 वर्ष की उम्र में विवाहित उसकी सौतेली बहन पार्वती ने भी फिर से पढ़ाई शुरू करने का फैसला ले लिया।

कोइलहिया और मधुपुर में समुदाय के कई सदस्यों को अपनी बेटियों को अच्छा भविष्य प्रदान करने के लिए इस बात से प्रेरणा मिली है कि कुसुम ने किस तरह एक संभावित बालिका वधू से कॉलेज जाने वाली शिक्षिका बनने की इच्छुक लड़की तक की अपनी यात्रा पूरी की।

घर–वापसी की खुशी

गरीब परिवारों के चार बच्चों को, जो अपनी आंखों में सपने संजाये थे, एक मानव तस्कर द्वारा अमानवीय व्यवहार और शोषण का शिकार बनाया गया। बाद में इन बच्चों को उनके गांव की बाल संरक्षण समिति के सक्रिय हस्तक्षेप के द्वारा बचा लिया गया

अप्रैल 2014 को करवनिया गांव के चार किशोर बच्चे रहस्मय ढंग से गायब हो गये और उनके परिवारों पर जैसे विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। रिश्तेदारों और दोस्तो के घरों पर उनकी सरगर्मी से तलाश की गई पर कुछ पता नहीं चला। इनमें से दो लड़के – चंदन और ओम प्रकाश सगे भाई थे। चंदन 17 साल का था और ओम प्रकाश 14 साल का। 16–वर्षीय कमलेश उनका चचेरा भाई था और 15–वर्षीय विनय उनका पड़ौसी था।

ये लड़के डोम समुदाय के थे जो कि ऐतिहासिक रूप से पिछड़ा समूह है और जिसे अनुसूचित जातियों में भी निम्न माना जाता है। चंदन और ओम प्रकाश के पिता बाबूलाल के अनुसार "हम लोग अनपड़ हैं और हमारे पास एक ही हुनर है और वह है बांस की चटाई बुनना; यह कला हमें पिछली पीढ़ियों से प्राप्त हुई है।" डोम लोग गांव के बाहरी हिस्सों में रहते हैं। वे भूमिहीन हैं और सरकारी जमीनों पर बसे हुए हैं। उनकी घोर गरीबी को आसानी से देखा जा सकता है। डोमों के अधिकतर मकानों की छतें फूस और छप्पर की बनी हैं जिन्हें सहारा देने के लिए बांस के डंडे लगे होते हैं।

बच्चों को गायब हुए दो सप्ताह गुजर गये। उनकी मांएं घर के बाहर सड़क पर रोने बैठ गईं और अपने भाग्य को कोसने लगीं। गांव की बाल संरक्षण समिति के सदस्य जोगेन्द्र जी – जो वहां से गुजर रहे थे – की नजर उन पर पड़ी। जोगेन्द्र ने बताया, "मैंने उनके मां–बाप से स्थानीय थाने में एफ.आई.आर. दर्ज कराने को कहा।" बाल संरक्षण समिति के सदस्य उनके साथ

जिन बच्चों को बाल मजदूरी से बचाया गया, वे एक खुशहाल भविष्य की आशा करते हैं

15–वर्षीय
विजय

16–वर्षीय
कमलेश

14–वर्षीय
ओम प्रकाश

17–वर्षीय
चंदन

रामपुर बरकुनिया थाने में गये एफ.आई.आर. दर्ज करवा दी।

गांव की आंगनवाड़ी कार्यकर्ता के अनुसार, "जब सब इंस्पेक्टर ने लड़के के गायब होने की बात सुनी तो उसका शक तुरंत परमेश्वर पर गया।" परमेश्वर पड़ौस के गांव धर्मदासपुर में रहने वाला स्थानीय ठेकेदार था। वह मानव तस्करी के लिए कुख्यात था और गांव के कई बच्चों को पैसे, अच्छे जीवन और दूसरे फायदों का लालच देकर हरियाणा, गुजरात और पंजाब जैसे दूर के राज्यों में ले जा चुका था।

उसी दौरान बच्चों के एक पड़ौसी, ओम प्रकाश बिंद के पास फोन आया। फोन पर कमलेश सिसक रहा था। उसने बिंद से कहा कि वह उसे और बाकी तीनों बच्चों को ठेकेदार के चंगुल से बचा ले। उसने फुसफुसाते हुए कहा, "हमें बंद करके रखा गया है और काम के हालात अमानुषिक हैं। हमने कई दिन से ढंग से खाना तक नहीं खाया और हमें लगातार 12–12 घंटे काम करने को मजबूर किया जाता है।" वह जगह कहां है इस बारे में कमलेश इतना ही सुराग दे पाया कि वे किसी डिटर्जेंट की फैक्ट्री में है जो गुजरात में किसी जगह पर है।

जब बच्चों के परिवारों को उनकी दुदर्शा के बारे में पता चला तो वे सी.पी.सी. के सदस्यों के साथ स्थानीय थाने में गये। अब तक सब इंस्पेक्टर को यकीन हो चला था कि बच्चों के गायब होने के पीछे परमेश्वर का हाथ है। सी.पी.सी. के सदस्य कुछ कांस्टबलों के पास परमेश्वर के गांव गये पर पता चला कि वह फरार हो गया है। सी.पी.सी. के सदस्य राजकुमार ने बताया कि, "उसे यह खबर मिल चुकी थी कि चार बच्चों के गायब होने के मामले में पुलिस उसकी तलाश कर रही है।"

पुलिस ने उन दूसरे गांव के लोगों की मदद ली जहां के बच्चों अवैध तरीके से ले जाया गया था और जिन्हें बचा लिया गया था। इस तरह पुलिस और सी.पी. सी. के सदस्यों ने उस डिटर्जेंट फैक्ट्री का पता लगा लिया। जोगेन्द्र ने बताया कि, "रामपुर बरकुनिया थाने के सब इंस्पेक्टर ने फैक्ट्री के मालिक से फोन पर बात की और वह चारों लड़कों को छोड़ने को तैयार हो गया।"

आखिरकार वह दिन आ ही गया जब चारों बच्चे घर वापस लौटे। उस मौके पर उनके परिवारों और दोस्तों ने खुशी के आंसू बहाये। अगले कुछ दिन मिलन की खुशी में बीते।

चंदन ने बताया, "वह एक बुरे सपने जैसा अनुभव था। हम परमेश्वर से साप्ताहिक हाट पर मिले जहां हम बांस की चटाइयां वगैरह बेचने गये थे। उसने हमसे पूछा कि क्या 13,000 रुपये की तनखाह पर एक

"हमें कम से कम २० किलो के बोरों को उतारना-चढ़ाना पड़ता था और वह भी लगातार १२ घंटे तक।"

ओम प्रकाश, पुनर्वासित बच्चा

फैक्ट्री में काम करने में हमारी दिलचस्पी है। उसने कहा कि काम हल्का–फुलका और आसान है और दिन में 8 घंटे से ज्यादा काम नहीं कराया जायेगा। उसने कहा कि हमें केवल पैकेटों में डिटर्जेंट पाउडर भरना है।"

चारों परमेश्वर के झांसे में आ गये और घर छोड़कर चले गये। कमलेश का कहना है कि, "हमने सोचा कि इस पैसे से हमारे परिवारों को मदद मिलेगी।"

पर जल्दी उनके सपने चकनाचूर हो गये। सबसे छोटे लड़के ओम प्रकाश ने इस दर्दनाक अनुभव को याद करते हुए कहा, "हमें बोरियां उठानी पड़ती थीं और उन्हें ट्रक पर चढ़ाने–उतारने का काम करना पड़ता। एक बोरी का वजन 20 किलो से कम न था और यह काम हमें बिना रुके 12 घंटे तक करना पड़ता था।"

रहने की जगह भी बड़ी तकलीफदेह और दम घोंटने वाली थी। बहुत सारे लड़कों के लिए केवल एक नल था। खाना बच्चे खुद बनाते थे। चंदन ने बताया, "कुछ बच्चे हमारे गांव और पड़ौसी गांवों से थे। वे चमार

उनके बचाव और वापसी के बाद तीन लड़कों को सी.पी.सी. और एस.एम.सी. ने स्थानीय सरकारी स्कूल में दाखिला दिलाया गया।

और मुसाहर समुदायों के थे। हर किसी के लिए यह नरक जैसी स्थिति थी। किसी को भी एक पैसा तक नहीं दिया जाता था। खाने के लिए कूपन दिये जाते थे ताकि हम चावल और आलू खरीद सके। हर दिन जैसे नरक की तरह कष्टदायक था।"

यह सिलसिला कई दिनों तक ऐसे ही चलता रहा जब तक कमलेश ने – जो कभी स्कूल नहीं गया था – कोई रास्ता ढूंढने का फैसला न कर लिया। उसके मोबाइल फोन में 'टॉकटाइम' इतना हीं था कि वह फोन कर सके और किसी भी लड़के के पास पैसा नहीं था। उसने दिमाग लगाया और 'टॉकटाइम लोन' लिया जिसके बारे में उसने सुना था। पैसा उसके अगले रिचार्ज से कटना था। वह बिंद को फोन करने में सफल हो गया और इस तरह कष्टदायक हालत से चारों को बच्चों के छूटने की प्रक्रिया शुरू हुई।

बच्चों के गांव वापस लौटने के बाद सी.पी.सी. और एस.एम.सी. ने इस बात पर गौर किया और तीन बच्चों – चंदन, ओम प्रकाश और विजय – को पड़ौस के सरकारी स्कूल में दाखिला दिला दिया। अब उनके माता–पिता को आशा है कि स्कूल की शिक्षा से उनके बच्चों को बेहतर भविष्य मिल पायेगा। ये बच्चे अभी भी अपने और अपने परिवारों के लिए बेहतर जीवन का सपना देखते हैं।

उच्चतम नामांकन है गांव की जीत

जब सेंदुर गांव में 6-14 वर्ष की उम्र के सभी बच्चे स्कूल जाने लगे तो हर किसी का ध्यान उस ओर गया

किसी भी सामान्य दिन में सेंदुर गांव को दूर से ही पहचाना जा सकता है। आस–पास की पहाड़ियों में स्कूली यूनिफॉर्म में बच्चे सात बजे की प्रार्थना–सभा में पहुंचने के लिए पहाड़ियों पर चढ़ते दिखाई देते हैं। म्योरपुर ब्लॉक के सेंदुर गांव को पड़ोसी गांवों से जो बात अलग करती है वह यह है कि यहां 6–14 वर्ष का एक बच्चा ऐसा नहीं जो स्कूल न जाता हो।

सामाजिक कार्यकर्ता विमल भाई ने हमें बताया कि, "एक समय ऐसा था जब यहां एक भी ग्रामवासी पढ़ा–लिखा नहीं था, शून्य साक्षरता से शून्य आउट ऑफ स्कूल की ओर सेन्दूर गांव ने तेजी से प्रगति की है।''

यह सामान्य–सा सेंदुर गांव विंध्याचल की घुमावदार पर्वत श्रृंखलाओं में स्थित है। इस गांव से आप रिहंद बांध के क्षेत्र में स्थित थर्मल पावर स्टेशनों को देख सकते हैं। इनसे ही सोनभद्र जिला देश की "ऊर्जा राजधानी" बना है। इस गांव में 642 परिवार रहते हैं और इनमें से 52% परिवार आदिवासी समुदायों के हैं।

देश की अर्थव्यवस्था में अपने महत्वपूर्ण योगदान के बावजूद सेंदुर और उसके पड़ोसी क्षेत्र अनेक मामलों में पिछड़े हैं। यहां गरीबी की वजह से बच्चों को शिक्षा से वंचित होना पड़ा और उन्हें घरेलू कामकाज और दूसरे आर्थिक कार्यकलाओं में शामिल किया जाता था। सेंदुर के प्राथमिक स्कूल के सहायक शिक्षक जितेन्द्र सिंह का कहना है कि, "यहां शिक्षा मुख्य रूप से आर्थिक, व्यवसायगत और सामाजिक सांस्कृतिक कारणों से प्रभावित हुई है।"

कमजोर बच्चों के अधिकारों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए पूर्वी उत्तर प्रदेश बाल अधिकार परियोजना ने म्योरपूर के कई गांवों के स्कूल प्रतिभागिता प्रतिमान में काफी सुधार लाया था। साथ ही सेंदुर में बहुत ज्यादा बदलाव भी लाया। इस संबंध में एस.एम.सी. ने एक मंच के रूप में काम किया। आस–पास के इलाकों में चार स्कूल हैं– सेंदुर का प्राथमिक स्कूल, बलदेवगढ़ का जूनियर हाई स्कूल, और पिपरी तथा अनपरा के सरकारी स्कूल।

"स्कूलों के गांव के काफी निकट होने के बावजूद माता-पिता को अपने बच्चों को स्कूल भेजने के लिए राजी करने में काफी समय और प्रयास लगा।"

कन्हैया लाल,
एस.एम.सी. अध्यक्ष,
सेंदुर प्राथमिक स्कूल

सेंदुर गांव के सभी बच्चों के स्कूल जाने के कारण, गांव ने एक रिकॉर्ड बना लिया है

एस.एम.सी. के अध्यक्ष कन्हैया लाल का कहना है कि, "स्कूल इतने पास में होने के बावजूद हमें बच्चों के माता–पिता को यह बात समझाने में काफी वक्त लग गया कि वे अपने बच्चों को स्कूल भेजें।"

एस.एम.सी. की एक अन्य सदस्य, कुसुम ने हमें बताया कि, "यहां दो तरह के बच्चे थे। एक तो वे जिनका दाखिला नहीं हुआ था और दूसरे वे जिन्होंने बीच में ही पढ़ाई छोड़ दी थी यानि कि जो ड्राप आउट थे।"

इस गांव में तीन बस्तियां हैं, जिनके नाम हैं "महराखोटी, कथवा और चितौर।" एस.एम.सी. की सदस्य रंगीता ने बताया, "हमने अपने को तीन समूहों में बांट लिया और हर समूह एक–एक बस्ती में गया। हमने माता–पिता से बात की और उन्हें शिक्षा के महत्व तथा बाल अधिकारों के बारे में समझाया।"

एस.एम.सी. के एक दूसरे सदस्य लालजी ने बताया कि, "हमने उनको दाखिला दिया, जिनका दाखिला नहीं हुआ था। इसके बाद हमने बीच में पढ़ाई छोड़ने वाले या फिर अनुपस्थित रहने वाले बच्चों को स्कूल में भर्ती किया।"

कन्हैया लाल ने बताया कि, "अगर कोई बच्चा सात दिन स्कूल नहीं आता तो हम उस बच्चे के घर जाते हैं और उसके माता–पिता को उसे स्कूल भेजने के लिए कहते हैं। हम इसी तरह से स्कूल में उपस्थिति को सुनिश्चित करते हैं।"

6 से 14 वर्ष आयु-समूह के 178 बच्चों को स्कूल में दाखिला दिलाया गया। इनमें से 88 प्रतिशत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग जैसे कमजोर तबकों के बच्चे थे।

इस संबंध में "स्कूल चलो!" रैलियां आयोजित की गईं जिनमें बच्चों और शिक्षकों ने तो भाग लिया ही, ग्राम प्रधान और एस.एम.सी. के सदस्यों ने भी भागीदारी की।

इस मौके पर इस प्रकार के नारे लगाये गये थे, "आधी रोटी खायेंगे, पढ़ने स्कूल जायेंगे।"

"सुन मेरे भाई, सुन मेरी बहना, पढ़–लिखकर बड़ा है बनना।"

धीरे–धीरे करके बदलाव आया। बच्चों के माता–पिता उन्हें नियमित रूप से स्कूल भेजने लगे। अब उपस्थिति 40% से काफी अधिक बढ़ गई थी। जनवरी 2014 में सभी बच्चे – जिनकी संख्या 178 थी, स्कूल में दाखिल किये जा चुके थे। इस संबंध में ग्राम शिक्षा समिति, जो कि पंचायत स्तर पर एक शिक्षा समिति है, के सामने एक विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत की गई। इसके बाद ग्राम शिक्षा समिति ने सेंदुर गांव को "ऐसा गांव जहां सभी बच्चे स्कूल जाते हैं घोषित कर दिया।"

गांव के लोग बहुत खुश हैं क्योंकि उनके गांव को स्कूल में बच्चों के उच्चतम नामांकन और नियमित उपस्थिति के लिए मान्यता दी गई है। गरीबी, शिक्षा के अभाव और बच्चों के अधिकारों के उल्लंघन के दुश्चक्र से बाहर निकलना सेंदुर गांव के लिए आसान नहीं था, पर इस गांव ने अपनी तरह से एक जीत हासिल की है।

बच्चों द्वारा संचालित जागरुकता रैलियों ने सभी को शिक्षा के महत्व के बारे में अति उत्साहित किया है

लंबे संघर्ष से मिली विजय

सी.पी.सी. ने गैर-उत्तरदायी स्कूल प्रणाली से सही प्रकार से निबटते हुए सुनिश्चित किया कि आठ छोटी लड़कियां प्राइमरी पास करने के बाद अपर प्राइमरी स्कूल में दाखिल हो सकें

भरपुरा के सरकारी प्राइमरी स्कूल में अपनी शिक्षिका को याद करते हुए शीला खिल–खिलाकर हंस पड़ती है। वह बताती है कि, "वह कक्षा में झपकियां लेती रहती थी, हमसे चाय भी बनवाती थी और कई बार तो उनके बालों से जुएं भी निकालनी पड़ती थीं।" स्कूल का वातावरण सही न होने के बावजूद भी शीला और उसकी सात सहेलियों को पढ़ाई अच्छी लगती थी और वे नियमित रूप से स्कूल जाती थीं।

सी.पी.सी. के सदस्यों ने सुनिश्चित किया कि बच्चों को अपर प्राइमरी स्कूल में प्रवेश करने के लिए ट्रांसफर सर्टिफिकेट और जरूरी कागज़ात मिले

प्राइमरी की शिक्षा पूरी करने के बाद, शीला और उसकी सात सहेलियां सरकारी अपर प्राइमरी स्कूल में जाने की आशा कर रही थीं। पर अपर प्राइमरी स्कूल के अधिकारियों ने उन्हें बताया कि प्रवेश पाने के लिए प्राइमरी स्कूल से ट्रांसफर सर्टिफिकेट (टी.सी.) प्राप्त करने की जरूरत होती है। लड़कियों को हैरानी तब हुई जब प्राइमरी स्कूल के "हैडमास्टर" ने उन्हें सूचित किया कि उनके सर्टिफिकेट खो गये हैं। शुरू में माता–पिता अपनी लड़कियों के साथ रोज स्कूल जाकर सर्टिफिकेट्स के लिए अनुरोध करते थे, पर अधिकारियों के तो जैसे कान बहरे हो चुके थे।

15–वर्षीय अनीता ने बताया कि, "हैडमास्टर ने हमारे साथ जरा भी सहयोग नहीं किया। हमें सर्टिफिकेट देना उन्होंने जरूरी नहीं समझा और सर्टिफिकेट न होने पर हमें अपर प्राइमरी स्कूल में दाखिला देने से मना कर दिया गया।"

शीला और उसकी सहेलियां तब बहुत ही हताश हो गईं जब प्राथमिक स्कूल के हैडमास्टर ने उन्हें बताया कि उनका ट्रांसफर सर्टिफिकेट (स्थानांतरण प्रमाण पत्र) कहीं खो गया है।

बच्चों के अधिकारों को सुरक्षित करने के लिए भरपुरा गांव के सी.पी.सी. सदस्यों ने स्कूल प्रशासन की निष्क्रियता को दूर करने की ओर काम किया

एक लड़की की मां मंजु देवी ने बड़े अफसोस के साथ कहा कि, "हम अपनी लड़कियों की शिक्षा के लिए उनके सामने हाथ–पांव जोड़ रहे थे। हम अनपढ़ हैं और हमने अपनी बेटियों के लिए बेहतर जिंदगी की कामना की थी।"

शीला ने याद करते हुए बताया कि, "एक लंबे संघर्ष के बाद हमने हार मान ली। हम घर के नियमित कामों, खेतों के काम और मवेसी चराने के काम में लग गईं। जब मैं दूसरे बच्चों को स्कूल जाते देखती थी तो मुझे बहुत बुरा लगता था क्योंकि मैं भी स्कूल जाना चाहती थी। कई लोग हम पर इस तरह के ताने कसते थे कि हम तो बस मटरगश्ती कर रही हैं और वे हमारे लिए बुरे दिन थे।"

सी.पी.सी. के सदस्यों ने अपर प्राइमरी स्कूल के हैडमास्टर को बताया कि आर.टी.ई. नियमों के अंतर्गत अपर प्राइमरी स्कूल में प्रवेश के लिए प्राइमरी स्कूल से ट्रांसफर प्रमाण पत्र प्राप्त करना जरूरी नहीं है।

इस घटना को दो वर्ष गुजर गये और उनकी रही–सही आशा भी जाती रही। फिर 2013 के दौरान, सी.पी.सी. की एक बैठक में एक लड़की के पिता ने दुख के साथ स्कूल अधिकारियों के साथ हुए लंबे संघर्ष के बारे में बताया। सी.पी.सी. के सदस्यों ने तुरन्त एकमत होकर यह सुनिश्चित किया कि लड़कियों को शिक्षा का अधिकार मिलना चाहिए। वे जाकर अपर प्राइमरी स्कूल के "मुख्याध्यापक" से मिले जिन्होंने बताया कि प्राइमरी स्कूल से टीसी प्राप्त किये बिना दाखिला मिलना संभव नहीं है। सी.पी.सी. के सदस्य इस उत्तर के लिए तैयार बैठे थे, उन्होंने मुख्याध्यापक को बताया कि आर.टी.ई. नियमों के अंतर्गत अपर प्राइमरी स्कूल में प्रवेश के लिए प्राइमरी स्कूल से टीसी प्राप्त करना जरूरी नहीं है। इस ठोस तर्क के सामने "मुख्याध्यापक" को हार मान लेनी पड़ी। उसने आठों लड़कियों के माता–पिता से शपथ पत्र (एफिडेविट) जमा करने को कहा और इन्हें प्राप्त करने में सी.पी.सी. के सदस्यों ने माता–पिता की मदद की।

जब शीला और उसकी सहेलियों को अपर प्राइमरी स्कूल में दाखिला मिला तो यह सचमुच एक खुशी का अवसर था। वे उत्साह के साथ फिर से पढ़ाई करने में जुट गई जो उन्हें सबसे ज्यादा पसंद थी।

उनमें से अधिकतर शिक्षिका बनकर गांव में स्कूल की शिक्षा में सुधार लाना चाहती हैं। उनके माता–पिता को इससे लम्बे दौर के बाद राहत मिली और सी.पी.सी. द्वारा प्रदान की गई सहायता को उन्होंने गहराई से सराहा।

गंगहरा गांव की अनूठी महिला

अपने परिवार और गंगहरा कला गांव के समुदाय-आधारित बाल संरक्षण समूहों की सहायता के बिना आशा देवी सफल न हो पाती

मिर्जापुर जिले के लालगंज ब्लॉक के गंगहरा गांव की 32–वर्षीय आशा देवी के दिन घर के काम–काज करने जैसे कि झाड़ू पोछा करने, खाना बनाने, कपड़े धोने और बच्चों की देखभाल करने में बीतते थे। उसका पति एक खेतिहर मजदूर था और उसकी 54–वर्षीय सास, सोनकली देवी गांव की आंगनवाड़ी कार्यकर्ता थी। फिर 2010 में आशा ने पंचायत के चुनाव लड़े और महिलाओं के लिए आरक्षित सीट पर विजय प्राप्त की। पहली बार गंगहरा गांव में कोई महिला ग्राम प्रधान बनी थी।

महिला ग्राम प्रधान बनने पर भी आशा के लिए कोई बदलाव नहीं आया। वह अपर प्राइमरी स्कूल से आगे पढ़ाई नहीं कर पाई थी और अपने पद के अनुसार प्रशासन तथा अभिशासन के कार्य से तो वह कोसों दूर थी।

काफी समय तक तो आशा बाल अधिकारों के संबंध में सी.पी.सी. और महिला समूह द्वारा आयोजित बैठकों में जाने से बचती रही। इसके बाद दिसम्बर 2012 में उसने महिला प्रधानों के लिए आयोजित प्रशिक्षण सत्र में और फिर जून 2013 में दूसरे प्रशिक्षण सत्र में भाग लेकर पहला कदम उठाया।

इस तरह वह खुद को समझने लगी और घर के कामकाज की दुनिया से बाहर क्या होता है, यह

ग्राम प्रधान, आशा देवी

आशा देवी अपर प्राइमरी स्कूल से ज्यादा नहीं पढ़ी थी और प्रशासन तथा अभिशासन क्या होता है, यह उसे पता भी नहीं था, जबकि प्रधान के रूप में यह सब जानना उसके लिए जरूरी था।

समझने की प्रक्रिया भी शुरू हुई। आशा ने एक प्रधान के रूप में अपने कर्तव्यों और जिम्मेदारियों के बारे में जाना। बच्चों के मुद्दों के प्रति भी उसमें जागरूकता एवं संवेदनशीलता पैदा हुई। उसके पति ने भी उसकी मदद की पर उसे असली उत्साह और सहारा

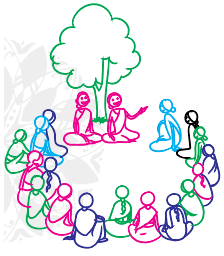

"सी.पी.सी. और महिला समूह की बैठकों में मुझे महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य तथा स्वच्छता के बारे में जानकारी मिली। साथ ही मैं बाल विवाह की समस्याओं के बारे में भी समझ गई। इसने मेरी आंखें खोल दी और फिर मैंने बदलाव में योगदान करना जरूरी समझा।"

आशा देवी, प्रधान

अपनी सास से मिला। सोनकली देवी ने आशा में उन मुद्दों के प्रति दिलचस्पी की एक चमक देख ली थी जो मुद्दे उसके अपने दिल के नजदीक थे। बस फिर क्या था, वह धीरे–धीरे करके आशा को अपने समुदाय सेवा के अनुभवों के बारे में बताने लगी।

आशा ने अपने विकास और ग्राम प्रधान के रूप में अपनी भूमिका की दिशा में धीरे–धीरे कदम बढ़ाये। वह नियमित रूप से आंगनवाड़ी केन्द्र जाने लगी और उसने वैक्सीन किस प्रकार दी जाती हैं, इसका निरीक्षण करने के लिए ग्राम स्वास्थ्य और पोषण दिवस में जाना शुरू किया। वह गांव के सरकारी स्कूल में आकस्मिक दौरे भी करती थी ताकि यह जानकारी प्राप्त कर सके कि शिक्षक–शिक्षिकाएं बच्चों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं।

गंगहरा गांव में आज एक नया उत्साह और एक नयी ऊर्जा देखने को मिलती है। आखिरकार उनकी पहली महिला प्रधान घर के दायरे से बाहर निकलकर समुदाय के विकास के केन्द्र में जो आ गई है! अपने इस बदलाव में अपनी सास के अलावा आशा देवी ने गांव की बाल संरक्षण समिति के योगदान को भी स्वीकार किया है।

सी.पी.सी., महिला समूह के सदस्य और अपनी सास के प्रोत्साहन से आशा देवी एक सफल प्रबंधक बन पाई

खुले बेहतर जिंदगी के दरवाज़े

रामनगर की बाल संरक्षण समिति ने एक लड़की को अपनी तकलीफों से भरी जिंदगी पीछे छोड़ने में मदद करते हुए उसके लिए नई जिंदगी के दरवाजे खोले

ग्यारह वर्षीय पूनम अपने कच्चे, एक कमरे के घर के आंगन में बैठी बर्तन मांज रही है। यह उसका रोज का काम है। वह कभी स्कूल नहीं गई थी और अक्सर अपनी मां के साथ खेतों में मजदूरी करती थी। उसने कभी सोचा भी नहीं था कि इससे अलग भी कोई जिंदगी हो सकती है।

मिर्जापुर जिले के पहाड़ी ब्लॉक के रामनगर गांव में रहने वाले पूनम के परिवार के लिए जीवन अत्यधिक कष्टपूर्ण था। पहले से ही गरीबी के बीच पिस रहे इस परिवार को चार साल पहले तब करारा धक्का लगा, जब पूनम के पिता रामशंकर घर छोड़कर चले गये और फिर कभी वापस नहीं आये। पूनम और उसका परिवार आजीविका के साधन के बिना सदमे की स्थिति में आ गया था। ऊपर से उन पर कर्जे का भार था। जीवन कठिन हो गया था। पूनम की मां केसरी देवी को घर से बाहर कदम निकालकर आजीविका कमानी पड़ी। वह खेत मजदूर के रूप में काम करने लगी और साथ में अपनी सबसे छोटी बेटी, पूनम को भी ले जाती थी।

सीपीसी की सलाह से पूनम और उसके जैसे कई बच्चे आज अपने सपनों को सफल करने की राह पर हैं

पिता के अचानक घर छोड़कर चले जाने से पूनम के जीवन में खालीपन भर गया और इतने वर्ष बाद भी यह बात उसे कचोटती रहती है। जब भी वह अपने पिता के बारे में बात करती है उसकी आंखें नम हो जाती हैं। वह कहती है कि पिता का अभाव उसे बेहद खलता है और वह अकेलापन महसूस करती है।

अपने खुद के बारे में पूनम की सोच और भविष्य के बारे में उसके विचार उसके मौजूदा वातावरण से बने हैं। उसे कभी पता ही नहीं था कि बचपन पढ़ने और खेलने, मजा करने तथा अपना विकास करने का समय होता है। उसने छोटी उम्र में ही अपनी दो बड़ी बहनों की शादी होते देखी थी। उसकी एक बहन जिसके दो बच्चे हैं, 23 साल की उम्र में ही विधवा हो गई। उसके ससुराल वालों ने उसे और दोनों बच्चों को घर से निकाल दिया।

ग्यारह-वर्षीय पूनम कभी स्कूल नही गई थी। वह घर के कामकाज में अपनी मां की मदद करती थी और परिवार की आय में योगदान करने के लिए खेतों में काम करती थी।

स्कूल से छूटे हुए बच्चों के माता–पिता को सी.पी.सी. के सदस्यों ने समझाया कि वे उन्हें स्कूल में दाखिला दिला दें

अपने बच्चों के साथ रामनगर में अपनी मां के घर लौटने के अलावा उसके पास कोई चारा नहीं बचा था।

अपनी बहन के जीवन को देखकर भविष्य के बारे में पूनम की कल्पना अस्पष्ट सी थी। उसने इस सच्चाई को मान लिया था कि जल्दी ही उसकी शादी कर दी जायेगी और उसके भाग्य में जो लिखा है, उसके साथ ही उसे निबटना होगा। फिर हुआ यह कि सी.पी.सी. में पूनम के मामले पर विचार–विमर्श किया गया क्योंकि वह स्कूल नहीं जाती थी और शिक्षा के अपने अधिकार से वंचित थी।

सी.पी.सी. के सदस्य पूनम की मां से मिले और उसे अपनी बेटी को मजदूरी न कराने, बल्कि स्कूल में दाखिला दिलाने के लिए कहा। केसरी ने साफ मना कर दिया और कहा कि वह जल्दी ही पूनम की शादी करा देगी। उसने यह भी बताया कि पूनम की दैनिक मजदूरी से परिवार की मदद होती है।

सी.पी.सी. के सदस्य इस संबंध में लगातार काम करते रहे। वे कई बार केसरी से मिले और उसे शिक्षा के महत्व के बारे में बताया। उन्होंने यह भी बताया कि अगर पूनम की विधवा बहन शिक्षित होती तो आज आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ी होती। सदस्यों ने आशा कार्यकर्ता, ए.एन.एम. और गांव के सरकारी स्कूल की शिक्षिकाओं के उदाहरण देकर यह भी बताया कि किस तरह शिक्षित महिलाएं अपना जीवन स्वयं बनाती हैं।

आखिरकार केसरी का परिवार राजी हो गया। हालांकि केसरी ने पहले कभी भी ऐसी बातचीत में

हिस्सा नहीं लिया और न ही उसे किसी ने ऐसी उम्मीदें दिखाई थीं, पर उसने इस बात की अच्छी भावना को समझ लिया। उसने इसमें पूनम के बेहतर भविष्य के लिए एक अवसर देखा। पूनम के लिए भी यह एक बड़ा कदम था। वह कभी स्कूल नहीं गई थी, पर इस बात से वह बहुत उत्साहित थी। पूनम जानती थी कि वह एक ऐसा जीवन छोड़कर जा रही है जो बहुत कष्टपूर्ण था।

स्कूल में भी समस्या सामने आई। प्राइमरी स्कूल के हैडमास्टर ने पूनम को उसकी उम्र के अनुसार की कक्षा में दाखिला देने से मना कर दिया। सी.पी.सी. के सदस्यों ने हैडमास्टर पर दबाव तो डाला पर उससे कोई फर्क नहीं पड़ा। हैडमास्टर द्वारा किये गये दुष्कर्म की घटना के बाद सी.पी.सी. के सदस्यों ने पूनम का मामला ब्लॉक स्तर की बैठक में उठाया। बी.ई.ओ. ने मामले को गंभीरता से लेते हुए हस्तक्षेप किया। अंत में पूनम को उसकी आयु के अनुसार कक्षा में दाखिला मिल गया।

सी.पी.सी. के सदस्य पूनम की मां से मिले और शिक्षा के महत्व के बारे में उसे जागरूक बनाया। उन्होंने आशा, ए.एन.एम. और गांव के सरकारी स्कूल की शिक्षिकाओं के उदाहरण देकर समझाया कि किस तरह वे शिक्षित हैं और उनका अपने जीवन पर नियंत्रण है।

इस समय पूनम छठी कक्षा में पढ़ रही है। वह और उसकी मां उसके उज्ज्वल भविष्य को लेकर आशावान हैं। समुदाय के सदस्यों को पूनम के जीवन में आये सकारात्मक बदलाव को देख कर सुखद आश्चर्य होता है। यह एक ऐसा उदाहरण है जो लंबे समय तक याद रखा जायेगा और जिसका अनुसरण भी किया जायेगा।

शब्दावली

1. ग्राम पंचायत

पंचायती राज्य की तीन–स्तरीय जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण प्रणाली के अंतर्गत ग्राम पंचायत स्थानीय स्व–शासन की प्राथमिक इकाई के रूप में ग्राम स्तर पर कार्य करती है। 500 या उससे अधिक की आबादी वाले हर गांव में एक ग्राम पंचायत होनी चाहिए। छोटे गांवों में दो या तीन गांवों के लिए एक समूह ग्राम पंचायत की स्थापना की जाती है। हर ग्राम पंचायत के अंतर्गत आने वाली आबादी का आकार विभिन्न राज्यों में अलग–अलग होता है।

ग्राम पंचायत के सदस्यों की संख्या आबादी के आकार पर निर्भर करती है और 7 से 17 तक हो सकती है। गांव के लोग सदस्यों का चयन पांच वर्ष की अवधि के लिए करते हैं। 21 वर्ष या उससे अधिक की आयु का कोई भी वयस्क चुनाव लड़ सकता है और 18 वर्ष या उससे अधिक की आयु का चुनाव में मतदान कर सकता है। एक सदस्य को सरपंच/प्रधान और एक अन्य सदस्य को उप सरपंच/उप प्रधान चुना जाता है।

2. ग्राम प्रधान

वह ग्राम प्रधान पंचायत का अध्यक्ष होता है। ग्राम पंचायत के प्रधान का चुनाव पंचायत क्षेत्र के लोगों द्वारा किया जाता है।

3. तहसील

तहसील जिलों के वे उप–भाग हैं जिनमें 200 से 600 तक गांव शामिल होते हैं। तहसीलदार तहसील के राजस्व विभाग का मुख्य सदस्य और इस स्तर पर सर्वोच्च अधिकारी होता है।

4. ब्लॉक (प्रखंड)

ब्लॉक जिले की एक उप–इकाई है। कुछ राज्यों में ब्लॉक्स और तालुका या तहसीलें एक ही सीमा के अंतर्गत आते हैं। कुछ अन्य राज्यों में तालुका या तहसीलों को ब्लॉक्स में बांटा जाता है।

5. अन्य पिछड़ा वर्ग (ओ.बी.सी.)

अन्य पिछड़ा वर्ग (ओ.बी.सी.) शब्दों का उपयोग भारत सरकार द्वारा सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ी जातियों के लिए किया जाता है। यह अनुसूचित जातियों और जनजातियों के साथ भारत की आबादी के अनेक आधिकारिक वर्गीकरणों में से एक है।

6. अनुसूचित जाति (एस.सी.)

''अनुसूचित जाति'' का मतलब है वह जाति और जनजाति या कुछ हिस्से या इन जाति या जनजातियों के भीतर समूह जो भारत के संविधान प्रयोजनों के लिए लेख 341 के तहत अनुसूचित जाति हैं।

http://lawmin.nic.in/coi/coiason29july08.pdf

7. अनुसूचित जनजाति (एस.टी.)

''अनुसूचित जनजाति'' का मतलब है वह जनजाति या आदिवासी समुदाय या कुछ हिस्से या इन जनजाति या आदिवासी समुदाय के भीतर समूह जो भारत के संविधान प्रयोजनों के लिए लेख 342 के तहत अनुसूचित जनजाति हैं।

http://lawmin.nic.in/coi/coiason29july08.pdf

8. समेकित बाल विकास सेवाएं (आई.सी.डी.एस.)

आई.सी.डी.एस. महिला एवं बाल विकास मत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत एक केन्द्रीय योजना है जिसका उद्देश्य आंगनवाड़ी केन्द्रों के माध्यम से छः वर्ष से कम आयु के बच्चों का समग्र विकास करना है।

यह आरंभिक बाल विकास और देखरेख की दृष्टि से विश्व का सबसे बड़ा कार्यक्रम है। इस योजना के अंतर्गत छह सेवाएं प्रदान की जाती हैं जो इस प्रकार हैं: पूरक पोषण, स्कूल–पूर्व अनौपचारिक शिक्षा, पोषण और स्वास्थ्य शिक्षा, टीकाकरण, स्वास्थ्य जांच और रेफरल सेवाएं।

9. बाल विकास परियोजना अधिकारी (सी.डी.पी.ओ.)

आंगनवाड़ी केन्द्र में आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं का पर्यवेक्षण आई.सी.डी.एस. सुपरवाइजर द्वारा किया जाता है। सुपरवाइजर ब्लॉक स्तर के आई.सी.डी.एस. अधिकारी, सी.डी.पी.ओ. के अधीन होता है। सी.डी.पी.ओ. कार्यक्रम निदेशक (पीडी) की सहायता करता है और ब्लॉक स्तर पर आई.सी.डी.एस. योजनाओं का समन्वय करता है, क्षेत्र–दौरे करता है, हर आंगनवाड़ी केन्द्र के लिए मासिक और वार्षिक बजट को अंतिम रूप देता है और समय–समय पर अपने कार्यक्षेत्र के आंगनवाड़ी केन्द्रों का निरीक्षण करता है।

10. आंगनवाड़ी केन्द्र

आंगनवाड़ियां भारत में सरकार द्वारा प्रायोजित बाल–देखरेख और मातृ देखरेख केन्द्र हैं। ये 3–6 आयु समूह के बच्चों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं को सेवाएं प्रदान करती हैं। हिंदी में इस शब्द का अर्थ है–"आंगन में बना आश्रय"। सरकार ने ये केन्द्र 1975 में बच्चों की भूख और कुपोषण का मुकाबला करने के लिए समेकित बाल विकास सेवा (आई.सी.डी.एस.) के अंग के रूप में आरंभ किये थे।

11. आंगनवाड़ी कार्यकर्ता

आंगनवाड़ी केन्द्र में सेवाएं आंगनवाड़ी कार्यकर्ता द्वारा प्रदान की जाती हैं जो कि एक अंशकालिक आनरेरी कार्यकर्ता होती है। वह स्थानीय समुदाय की महिला होती है और उसे लोगों द्वारा चुना जाता है। उसकी उसे मिडिल या माध्यमिक स्कूल तक शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए। उसकी सहायता के लिए आंगनवाड़ी सहायिका (ए.डब्ल्यू.एच.) होती है और वह भी स्थानीय महिला होती है।

12. प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (पी.एच.सी.)

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों का उद्देश्य ग्रामीण आबादी की स्वास्थ्य देखरेख जरूरतों को पूरा करना है। हर

पी.एच.सी. के अंतर्गत एक लाख की आबादी और लगभग 100 गांव आते हैं। न्यूनतम शर्त के रूप में एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में एक चिकित्सा अधिकारी, 14 अर्ध–चिकित्सा अधिकारी और अन्य कर्मचारी होने चाहिए। पी.एच.सी. के स्तर पर एक स्वास्थ्य कार्यकर्ता (महिला)/ए.एन.एम. और एक फार्मेसिस्ट/प्रयोगशाला तक्नीशियन/नर्सिंग स्टाफ भी उपलब्ध होता है।

13. आग्जीलियरी नर्स मिडवाइफ (ए.एन.एम.)

ए.एन.एम. (आग्जीलियरी नर्स मिडवाइफ) वह महिला कार्यकर्ता है जो समुदाय की स्वास्थ्य देखरेख के अध्ययन में विभिन्न प्रशिक्षण प्राप्त करती है। स्वास्थ्य देखरेख के अलावा ए.एन.एम. उपकरणों की देखभाल, आपरेशन थियेटर को तैयार करने, रोगियों को समय पर दवाइयां देने और रिकार्ड तैयार करने के बारे में भी सीखती हैं।

ए.एन.एम. एक बहुउद्देश्यीय (मल्टीपरपज) विस्तार स्वास्थ्य कार्यकर्ता है जो समुदाय और सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली के संपर्क बिन्दु पर कार्य करती है। ए.एन.एम. उपकेन्द्रों का प्रबंधन करती है जो कि भारतीय स्वास्थ्य प्रणाली की परिधीय चौकी (पेरिफेरियल आउटपोस्ट) है। ग्राम स्तर पर एक ए.एन.एम. 3,000–5,000 की आबादी को सेवाएं प्रदान करती है। उसे बहुत से विभिन्न प्रकार के रोकथामकारी और उपचारी कार्य करने होते हैं जैसे कि लोगों को परिवार नियोजन और टीकाकरण के लिए उत्प्रेरित करना, प्रसव कराना और बच्चों की बीमारियों का उपचार करना। उसकी जिम्मेदारी है कि वह उपकेन्द्र वाले गांव में रहेगी और हर समय उपलब्ध रहेगी।

14. एक्रीडिटिड सोशल हैल्थ एक्टिविस्ट (आशा)

राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (एन.एच.एम.)
द्वारा देश के हर गांव में एक प्रशिक्षित महिला समुदाय कार्यकर्ता की व्यवस्था की है जिसे एक्रीडिटिड सोशल हैल्थ एक्टिविस्ट या आशा कहते हैं। उसे गांव से ही चुना जाता है और वह गांव के प्रति उत्तरदायी होती है। आशा को समुदाय और सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली के बीच संपर्क बिन्दु के रूप में कार्य करने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है।

15. ग्राम स्वास्थ्य और पोषण दिवस (वी.एच.एन.डी.)

वी.एच.एन.डी. राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन द्वारा आरंभ किया गया एक देश स्तरीय कार्यक्रम है और प्राथमिक देखरेख का पहला संपर्क बिन्दु है। यह स्वास्थ्य और आई.सी.डी.एस. विभाग और समुदाय के सेवा–प्रदाताओं के बीच संपर्क का पहला बिन्दु है। वी.एच.एन.डी. का आयोजन गांव के आंगनवाड़ी केन्द्र में हर महीने (मुख्य रूप से बुद्धवार को; और जो गांव छूट गये हों उनके लिए उसी महीने के अगले दिन) किया जाता है। इससे वी.एच.एन.डी. के आयोजन में एकरूपता सुनिश्चित होती है।

व्यक्तियों सहित अवयस्कों के नाम तथा उनकी फोटो उनकी सहमति लेकर प्रकाशित किए गए हैं।

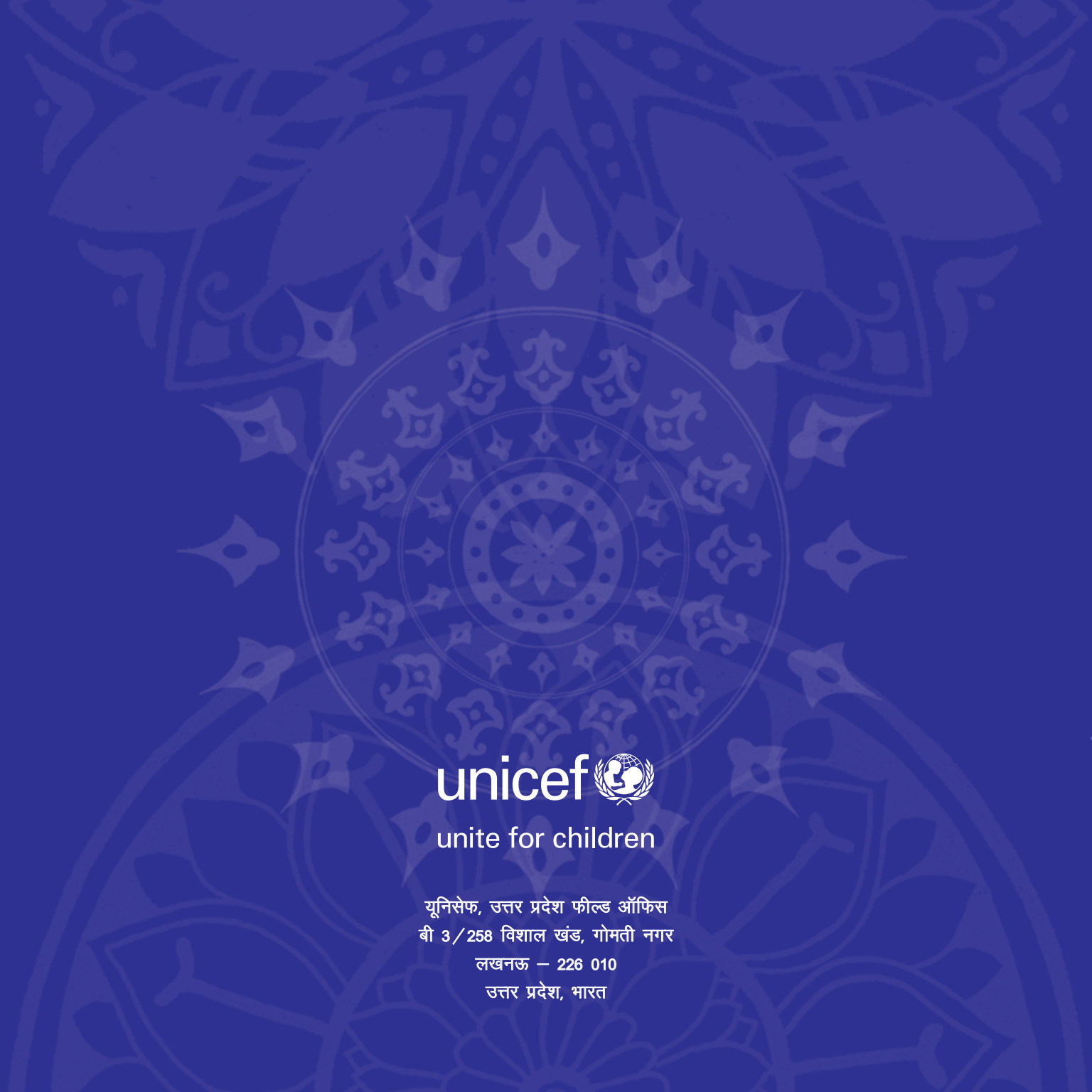

unicef

unite for children

यूनिसेफ, उत्तर प्रदेश फील्ड ऑफिस
बी 3/258 विशाल खंड, गोमती नगर
लखनऊ – 226 010
उत्तर प्रदेश, भारत